द्वि-दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन 15-16 अक्टूबर-2026

# भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम

## Abstract Book


प्रधान संपादक

डॉ. योगेश शर्मा

संपादक

डॉ. राजेश कुमार मिश्र

सह-संपादक

डॉ. कल्पना शर्मा, डॉ. सुचित्रा भारती

डॉ. तरुण कुमार दीप, डॉ. कुलदीप सिंह



GLOBAL SANSKRIT FORUM वैश्विक संस्कृत मञ्च यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्

ग्लोबल संस्कृत फोरम, दिल्ली

द्वि दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन-15&16 अक्टूबर2026-

# भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम

## Abstract Book


**प्रधान संपादक**

डॉ. योगेश शर्मा

**संपादक**

डॉ. राजेश कुमार मिश्र

**सह-संपादक**

डॉ. कल्पना शर्मा

डॉ. सुचित्रा भारती

डॉ. तरुण कुमार दीप

डॉ. कुलदीप सिंह

दिवसीय

## द्वि-दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन 15&16 अक्टूबर-2026

विषय

# भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम

## Abstract Book

**मुख्य संरक्षक**

**श्रीमान् अजय सूरी जी**

अध्यक्ष, गवर्निंग बॉडी, पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय (सान्ध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय

**संरक्षिका**

**प्रो. हरिन्द्री चौधरी,** प्राचार्या

पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय (सान्ध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय

**प्रधान संपादक**

डॉ. योगेश शर्मा

**संपादक**

डॉ. राजेश कुमार मिश्र

**सह-संपादक**

डॉ. कल्पना शर्मा

डॉ. सुचित्रा भारती

डॉ. तरुण कुमार दीप

डॉ. कुलदीप सिंह

**प्रकाशक**

## ग्लोबल संस्कृत फोरम, दिल्ली

Page Setting :
**Krishna Computer Sansthan,**
Daraganj, Prayagraj – 211006

**प्रो. रमाकान्तपाण्डेयः**
कुलपतिः
*Prof. Ramakant Pandey*
Vice-Chancellor

**उत्तराखण्डसंस्कृतविश्वविद्यालयः**
हरिद्वार-देहली-राष्ट्रियराजमार्गः
बहादराबादः, हरिद्वारम्-249402 (उत्तराखण्डम्)
दूरभाषः : 01334-297021
ई-मेलसङ्केतः/E-mail : vc@usvv.ac.in
अन्तर्जालम्/Website : www.usvv.ac.in
UTTARAKHAND SANSKRIT UNIVERSITY
Haridwar-Delhi-National Highway
Bahadrabad, Haridwar-249402 (Uttarakhand)

पत्राङ्कः 6004/कुलपतिपटलम्
दिनाङ्कः 12-10-2026

## शुभकामना-सन्देशः

"तमसो मा ज्योतिर्गमय" इति भव्यभावभरितदिव्यसन्देशेन आविश्वं सर्वदा ज्ञानमयम् आलोकं सम्पादयन्ती वैज्ञानिकचिन्तनोपेता गौरवमयी भारतीयज्ञानपरम्परा न केवलमतीतस्य अपितु संसारस्य सार्वकालिकोपयोगित्वसाधिका वर्तते। दिल्ली-संस्कृत-अकादम्याः कला-संस्कृति-भाषा-विभागः, दिल्लीविश्वविद्यालयस्य पी.जी.डी.ए.वी.महाविद्यालयः (सायंकालीनः) वैश्विकसंस्कृतमंचं चेत्येतेषां संयुक्ततत्त्वावधाने 'भारतीयज्ञानपरम्परायाः विविधा आयामाः' इति विषयकं समायोज्यमानमिदं द्विदिवसात्मकम् अन्ताराष्ट्रियसम्मेलनं भारतीयज्ञानपरम्परायाः समृद्धिं, संस्कृतभाषायाः वैश्विकं महत्त्वं भारतीयसंस्कृतेः प्रचारं प्रसारं च वर्धयतु इति भगवतीं पुण्यसलिलां भागीरथीं प्रार्थये।

सर्वेषामायोजकानां प्रतिभागिनाञ्च परिश्रमस्य सार्थकतां कामयमानः सम्मेलनस्याऽस्य सर्वाङ्गीणसफलतायै शुभकामनाः समाविष्करोति।

(प्रो.रमाकान्तपाण्डेयः)
कुलपतिः

**प्रो.बिष्णुपदमहापात्रः**
**आचार्यः, न्यायविभागः**
श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः
(केन्द्रीयविश्वविद्यालयः)
नवदेहली-११००१६

**Prof. Bishnupada Mahapatra**
**Professor, Dept. of Nyaya**
HOD in Research and Publication
SLBSNSU, New Delhi – 11016
Mob: + 91-9911256500
Email: bpdm1970@gmail.com

Date: 12.10.2026

# शुभाशंसा

**प्रवृत्तिर्वा निवृत्तिर्वा नित्येन कृतकेन वा ।**
**पुंसां येनोपदिश्येत तच्छास्त्रमभिधीयते ।।**

भारतीयज्ञानपरम्परायाम् अष्टादशविद्यास्थानानि विद्यन्ते । तथाहि- अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः । पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या ह्येता चतुर्दश ।। आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्चेति ते त्रयः । अर्थशास्त्रं च विज्ञेयं विद्या ह्यष्टादशैव तु ।। एतेषां विद्यास्थानानां परमं ध्येयं भवति धर्मार्थकाममोक्षाख्येषु परमपुरुषार्थस्य मोक्षस्यैव सम्पादनम् । एतत् सर्वं मनसि निधाय सर्वैः शास्त्रकारैः भारतीयज्ञानपरम्परायाः विकासः कृतः। सर्वं ज्ञानेन प्रकाशते। ज्ञानमन्तरा मानवस्य समाजस्य सर्वविधप्रकारस्य च कल्याणं कथमपि भवितुं नार्हति। तथा चोक्तं भगवता श्रीकृष्णचन्द्रेण 'न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।'

भारतीयज्ञानपरम्परायाः महत्त्वम् अभिलक्ष्य पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य) (दिल्लीविश्वविद्यालयः), संस्कृति एवं भाषा विभाग, दिल्ली संस्कृत अकादमी, वैश्विकसंस्कृतमञ्च इति एतेषां त्रयाणां संयुक्ततत्त्वावधाने 'भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम' इति विषयं स्वीकृत्य द्विदिवसीयान्ताराष्ट्रियसम्मेलनम् समायोज्यते, तत्र शोधलेखानाञ्च प्रकाशनं क्रियते इति श्रुत्वा मोमुद्यते मे चेतः।

एवं च भारतीयसंस्कृतेः संरक्षणं संस्कृतं विना कदापि नैव सम्भवति। संस्कृतं तावत् मानवजीवनस्य सार्वभौमिकं विकासं जनयति। भारतीयज्ञानविज्ञानं प्राणिमात्रस्य कल्याणार्थम् उपदिशति सततं चिन्तयति। तत्र भारतीयज्ञानपरम्परायां सर्वं ज्ञान-विज्ञान-तत्त्वं सर्वथा निहितं विद्यते। विशेषतः वेदादिषु शास्त्रादिषु च विद्यमानानि यानि सामाजिकाभ्युदयतत्त्वानि वैज्ञानिकतत्त्वानि विद्यन्ते तेषां तत्त्वानां समाजोन्मुखीकरणम् अनेन ग्रन्थरत्नेन भविष्यतीति मे भाति । एतदर्थं प्रकाशकेभ्यः सम्पादकेभ्यश्च भूरिशः धन्यवादाः शुभाशीर्वादाश्च प्रदीयन्ते। अनेन संस्कृतजगति निगूढतत्त्वानां समुद्घाटनाय एतेषां सम्पादकानां काय-वाग्-बुद्धि-मनांसि सततं सुस्थतामेकरूपतां च प्राप्नुयुरिति भगवन्तं श्रीवेंकटनाथं सम्प्रार्थ्य विरमामीति शम् ।

बिष्णुपद महापात्र.

**प्रो.बिष्णुपदमहापात्रः**

**संस्कृत विभाग**
**DEPARTMENT OF SANSKRIT**
**दिल्ली विश्वविद्यालय**
**UNIVERSITY OF DELHI**
**दिल्ली -110021**
**DELHI-110021**

**प्रो. दया शंकर तिवारी**
**Prof. Daya Shankar Tiwary**
**प्रभारी, संस्कृत विभाग, दक्षिण परिसर**
Professor-in-charge
Department of Sanskrit
South Campus

**011 - 24157271**
**Web-site - sanskrit.du.ac.in**

**E-mail –**
dstiwary@sanskrit.du.ac.in
docdstiwari@yahoo.com

संस्कृत/**2026**
**Skt/2026**

**दिनाँक: 13.10.2026**
**Dated: 13.10.2026**

# शुभाशंसा

**"आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः"(ऋग्वेद – १.८९.१)**

भारतीय ज्ञान परम्परा भारत की समृद्ध बौद्धिक विरासत, दार्शनिक चिन्तन, वैज्ञानिक अन्वेषण तथा सांस्कृतिक चेतना की सुदीर्घ यात्रा की आधारशिला है। यह परम्परा केवल अतीत की उपलब्धियों का संकलन नहीं, अपितु जीवन, जगत् और मानव के पारस्परिक सम्बन्धों को समझने वाली एक व्यापक ज्ञानदृष्टि है। इसमें ज्ञान को केवल सूचना अथवा बौद्धिक उपलब्धि के रूप में न देखकर विवेक, आत्मबोध, नैतिकता, लोकमंगल और जीवन के सम्यक् परिष्कार का साधन माना गया है। भारतीय मनीषा की यही उदात्त दृष्टि इसे सार्वकालिक तथा सार्वभौमिक महत्त्व प्रदान करती है। वेदों में ज्ञान-विज्ञान के मूल तत्त्व सन्निहित हैं इसलिए हम कह सकते हैं- **"वेदोऽखिलोज्ञानविज्ञानमूलम्"**। भारतीय ज्ञान परम्परा वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, पुराण, दर्शनशास्त्र, व्याकरण, न्याय, मीमांसा, साहित्यशास्त्र, आयुर्वेद, योग, गणित, ज्योतिष, वास्तुशास्त्र, नाट्यशास्त्र तथा संगीतशास्त्र इत्यादि विविध ज्ञानशाखाओं में निबद्ध है। इन ज्ञानक्षेत्रों में तत्त्वचिन्तन, तर्कपद्धति, भाषिक विश्लेषण, प्रकृति-अध्ययन, स्वास्थ्य-विज्ञान, कलात्मक अभिव्यक्ति तथा सामाजिक जीवन से सम्बन्धित बहुमूल्य विचार सुरक्षित हैं। इनका अध्ययन भारतीय मनीषियों की अनुसन्धानपरक दृष्टि, सूक्ष्म निरीक्षण, विश्लेषणात्मक क्षमता और ज्ञान के प्रति उनकी अनवरत जिज्ञासा को उद्घाटित करता है। भारतीय परम्परा में ज्ञान का विकास प्रश्न, संवाद, तर्क, परीक्षण, अनुभव तथा विमर्श के माध्यम से होता रहा है। अतः इस परम्परा का सम्यक् अनुशीलन हमारी बौद्धिक विरासत को समझने के साथ-साथ अनुसन्धान की सुदृढ़ दृष्टि विकसित करने में भी सहायक है। वर्तमान समय में भारतीय ज्ञान परम्परा का अध्ययन केवल ऐतिहासिक गौरवबोध तक सीमित नहीं रहना चाहिए। इसकी वास्तविक सार्थकता तभी सिद्ध होगी, जब प्राचीन ग्रन्थों में निहित अवधारणाओं, सिद्धान्तों और ज्ञान-पद्धतियों का पाठालोचन, ऐतिहासिक सन्दर्भों, तुलनात्मक अध्ययन तथा प्रमाणाधारित विश्लेषण के माध्यम से अनुशीलित किया

जाए। परम्परागत ज्ञान के प्रति सम्मान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का समन्वय आवश्यक है, ताकि उसके प्रामाणिक तत्त्वों, ऐतिहासिक उपलब्धियों तथा समकालीन उपयोगिता का विवेकपूर्ण निर्धारण किया जा सके। इस प्रकार का अध्ययन न केवल ज्ञान के संरक्षण में सहायक होगा, अपितु उसके परिष्कार, पुनर्व्याख्या और समुचित प्रसार के लिए भी नवीन सम्भावनाएँ प्रस्तुत करेगा।

समकालीन विश्व अनेक गम्भीर चुनौतियों से जूझ रहा है। पर्यावरणीय असन्तुलन, नैतिक मूल्यों का क्षरण, सामाजिक विषमता, मानसिक तनाव तथा जीवन की बढ़ती जटिलताएँ मानव समाज के सम्मुख विचारणीय प्रश्न प्रस्तुत करती हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा में निहित समन्वय, सह-अस्तित्व, आत्मानुशासन, प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता और लोककल्याण की अवधारणाएँ इन प्रश्नों पर विचार करने के लिए महत्त्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रदान करती हैं। **'सर्वे भवन्तु सुखिनः'** तथा **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** जैसे आदर्श मानवकल्याण और विश्वबन्धुत्व की भावना को अभिव्यक्त करते हैं। इन आदर्शों का समकालीन सन्दर्भों में विवेकपूर्ण अनुशीलन सामाजिक समरसता, मानवीय संवेदना तथा उत्तरदायी जीवनदृष्टि के विकास में सहायक हो सकता है। प्रस्तुत सङ्गोष्ठी की शोध-सार पुस्तक इस बौद्धिक प्रयास का महत्त्वपूर्ण दस्तावेज सिद्ध होगी। शोध-सार किसी अनुसन्धान के मूल उद्देश्य, समस्या, अध्ययन-पद्धति, प्रमुख तर्क तथा निष्कर्षों का संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित प्रतिपादन होता है। इस दृष्टि से शोध-सारों का सुव्यवस्थित संकलन विभिन्न अनुसन्धान-विषयों, पद्धतियों और निष्कर्षों से परिचित कराने के साथ-साथ भावी शोध की सम्भावनाओं को भी रेखांकित करता है। मुझे आशा है कि इस पुस्तक में संकलित शोध-सार भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयामों पर नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत करेंगे तथा अध्यापकों, शोधार्थियों, विद्यार्थियों और विषय-विशेषज्ञों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे।

इस महत्त्वपूर्ण शैक्षणिक उपक्रम के सफल आयोजन तथा शोध-सार पुस्तक के प्रकाशन के लिए मैं संस्कृत विभाग, पीजीडीएवी महाविद्यालय (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय एवं वैश्विक संस्कृत मंच के सभी पदाधिकारियों, आयोजकों सहयोगियों और विशेष रूप से प्रधान सम्पादक डॉ. योगेश कुमार शर्मा, सम्पादक डॉ. राजेश कुमार मिश्र तथा सह-सम्पादक डॉ. कल्पना शर्मा, डॉ. सुचित्रा भारती, डॉ. तरुण कुमार दीप और डॉ. कुलदीप सिंह को इस बौद्धिक एवं शैक्षणिक प्रयास के लिए साधुवाद निवेदित करता हूँ। शोध-सार पुस्तक के प्रकाशन का दायित्व निर्वहन करने वाले ग्लोबल संस्कृत फोरम, दिल्ली का प्रयास भी श्लाघनीय है। इस प्रकार के सामूहिक प्रयास भारतीय ज्ञान परम्परा के संरक्षण, संवर्धन तथा शैक्षणिक जगत् में उसके व्यापक प्रसार के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह द्विदिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सङ्गोष्ठी का आयोजन विद्वानों के मध्य सार्थक संवाद को प्रोत्साहित करेगा, युवा शोधार्थियों को मौलिक अनुसन्धान के लिए प्रेरित करेगा तथा भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध पक्षों के गहन अध्ययन हेतु नवीन दिशाएँ उद्घाटित करेगा। यह आयोजन परम्परा और आधुनिकता के मध्य सन्तुलित सम्बन्ध स्थापित करते हुए ज्ञान के प्रति वैज्ञानिक, आलोचनात्मक और मानवीय दृष्टिकोण को सुदृढ़ करने में सफल हो, यही मेरी हार्दिक शुभकामना है।

**प्रो. दया शंकर तिवारी**

# अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना

'साधना' सप्तमतल, केशवकुंज, झण्डेवाला, देशबन्धु गुप्तामार्ग,
नई दिल्ली–110055, दूरभाष–011–35122581,ई–मेल–**abisy84@gmail.com**

डॉ॰ बालमुकुंद पाण्डेय
संगठन सचिव

**युगाब्द 5128, विक्रमी संवत् 2083,**
**11 अक्टूबर 2026**

## शुभकामना संदेश

भारतीय ज्ञानपरम्परा केवल अतीत की गौरवगाथा नहीं, अपितु ज्ञान, दर्शन, विज्ञान, अध्यात्म, नैतिकता और मानवीय मूल्यों से समृद्ध एक ऐसी सतत प्रवाहमान बौद्धिक एवं सांस्कृतिक धारा है, जिसने सहस्राब्दियों से मानव सभ्यता को दिशा प्रदान की है। इसकी मूल चेतना में **'साविद्या या विमुक्तये'** अर्थात् विद्या वही है, जो मनुष्य को बंधनों से मुक्त करे, का उदात्त आदर्श निहित है। यह परम्परा ज्ञान को केवल सूचना अथवा आजीविका का साधन नहीं मानती, बल्कि व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, सामाजिक उत्तरदायित्व तथा विश्वकल्याण का माध्यम स्वीकार करती है।

भारतीय ज्ञानपरम्परा के विविध आयामों में वेद, उपनिषद्, वेदांग, दर्शन, साहित्य, व्याकरण, गणित, खगोलशास्त्र, आयुर्वेद, योग, कृषि, वास्तुशास्त्र, धातुविज्ञान, कला, संगीत, नाट्य, लोकपरम्पराएँ तथा पर्यावरणीय चेतना का विशिष्ट स्थान है। आचार्य पाणिनि की व्याकरणिक प्रतिभा, आर्यभट एवं ब्रह्मगुप्त का गणितीय योगदान, चरक एवं सुश्रुत की चिकित्सकीय दृष्टि, पतञ्जलि का योगदर्शन तथा भरतमुनि का नाट्यशास्त्र भारतीय मनीषा की व्यापकता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के उल्लेखनीय उदाहरण हैं।

भारतीय ज्ञानपरम्परा की वास्तविक शक्ति इसकी समन्वयवादी दृष्टि, संवादशीलता और विविधता में एकता की भावना में निहित है। **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** का विचार समस्त विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की प्रेरणा देता है, जबकि **'आनो भद्राः क्रतवो यन्तुविश्वतः'** का वैदिक संदेश सभी दिशाओं से श्रेष्ठ विचारों को ग्रहण करने की उदारता का परिचायक है। यह परम्परा तर्क, विमर्श, अनुभव, निरीक्षण और आत्मचिन्तन के माध्यम से ज्ञान की खोज को प्रोत्साहित करती है।

इसी भावना के साथ **'भारतीय ज्ञानपरम्परा के विविध आयाम'** विषय पर आयोजित इस शैक्षणिक एवं बौद्धिक पहल के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ। आशा है कि यह प्रयास भारतीय ज्ञान–विरासत के विविध पक्षों पर गहन चिन्तन, सार्थक विमर्श और नवीन शोध की संभावनाओं को प्रोत्साहित करेगा। साथ ही, यह युवा शोधार्थियों, शिक्षाविदों और ज्ञानान्वेषियों को अपनी सांस्कृतिक विरासत का वैज्ञानिक, तार्किक एवं समालोचनात्मक अध्ययन करने के लिए प्रेरित करेगा।

शुभकामनाएँ एवं हार्दिक अभिनन्दन।

(बालमुकुंद पाण्डेय)
संगठन सचिव

आज़ादी का अमृत महोत्सव

पी. जी. डी. ए. वी. कॉलेज (सांध्य)
( दिल्ली विश्वविद्यालय )
P.G.D.A.V. COLLEGE (EVENING)
(UNIVERSITY OF DELHI)

विकसित भारत अभियान 1947 TO 2047

नेहरू नगर, रिंग रोड, नई दिल्ली-110065
दूरभाष : 011-29845214
ई-मेल : principal@pgdave.du.ac.in
वेबसाईट : www.pgdavevecollege.in

सा विद्या या विमुक्तये

IS/ISO 21001:2018 Certified
IS/ISO 14001:2015 Certified

Nehru Nagar, Ring Road, New Delhi-110065
Phone : 011-29845214
E-mail : principal@pgdave.du.ac.in
Website : www.pgdavevecollege.in

पत्रांक संख्या ..........................

*Ref. No.* ..........................

दिनांक ..........................

*Date* ..........................

# अजय सूरी

**अध्यक्ष, गवर्निंग बॉडी**

## शुभकामना संदेश

भारतीय ज्ञान परम्परा हमारी सभ्यता की वह अक्षय धरोहर है, जिसने सहस्राब्दियों से मानवता को दिशा दी है। हमने हमेशा ज्ञान का प्रचार - प्रसार किया और सभी के हित की बात की। आज आवश्यकता है इस ज्ञान धरोहर को पुनः उजागर करने की।

मुझे यह जानकर अति प्रसन्नता हो रही है कि कला, संस्कृति एवं भाषा विभाग, दिल्ली सरकार, दिल्ली संस्कृत अकादमी, वैश्विक संस्कृत मंच, दिल्ली प्रान्त तथा संस्कृत विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 15 एवं 16 अक्टूबर 2026 को "भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम" विषय पर द्वि-दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।

इस सम्मेलन में प्रस्तुत शोधालेखों को स्मारिका (सोविनियर) के रूप में प्रकाशित किया जाना एक सराहनीय और स्वागतयोग्य पहल है। ऐसे प्रकाशन विद्वानों के चिन्तन को स्थायी रूप प्रदान करते हैं और शोधार्थियों, विद्यार्थियों एवं जिज्ञासु पाठकों के लिए

मार्गदर्शक सिद्ध होते हैं। मुझे विश्वास है कि यह स्मारिका भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध पक्षों को नई दृष्टि से प्रस्तुत करेगी तथा नई पीढ़ी को अपनी जड़ों से जोड़ने में सहायक होगी।

मैं सम्मेलन के सभी आयोजकों, संयोजकों, शोधपत्र प्रस्तोताओं और सहभागी विद्वानों को हार्दिक बधाई देता हूँ। सम्मेलन एवं स्मारिका की सफलता के लिए मेरी मंगलकामनाएँ।

शुभकामनाओं सहित,

आपका,

**अजय सूरी**

पी. जी. डी. ए. वी. कॉलेज (सांध्य)
( दिल्ली विश्वविद्यालय )
P.G.D.A.V. COLLEGE (EVENING)
(UNIVERSITY OF DELHI)

नेहरू नगर, रिंग रोड, नई दिल्ली-110065
दूरभाष : 011-29845214
ई-मेल : principal@pgdave.du.ac.in
वेबसाइट : www.pgdavevecollege.in

IS/ISO 21001:2018 Certified
IS/ISO 14001:2015 Certified

Nehru Nagar, Ring Road, New Delhi-110065
Phone : 011-29845214
E-mail : principal@pgdave.du.ac.in
Website : www.pgdavevecollege.in

पत्रांक संख्या ..........................

*Ref. No.* ..........................

दिनांक ..........................

*Date* ..........................

**प्रो. कृष्णा शर्मा**
सदस्या, गवर्निंग बॉडी

# शुभकामनाएँ

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि कला, संस्कृति एवं भाषा विभाग - दिल्ली सरकार, दिल्ली संस्कृत अकादमी, वैश्विक संस्कृत मंच - दिल्ली प्रान्त तथा संस्कृत विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 15 एवं 16 अक्टूबर 2026 को "भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम" विषय पर द्वि-दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। यह सम्मेलन देश-विदेश के विद्वानों, आचार्यों, शोधार्थियों और विद्यार्थियों को एक साझा मंच प्रदान करेगा, जहाँ विचारों का आदान-प्रदान होगा और भारतीय ज्ञान-सम्पदा के नए-नए पक्ष उद्घाटित होंगे।

इस सम्मेलन में प्रस्तुत शोधालेखों को स्मारिका (सोविनियर) के रूप में प्रकाशित करने का निर्णय निश्चय ही सराहनीय है। किसी भी संगोष्ठी की सार्थकता तभी पूर्ण होती है, जब उसमें हुआ चिन्तन-मनन लिखित रूप में संरक्षित होकर आगामी पीढ़ियों तक पहुँचे। यह स्मारिका शोधार्थियों के लिए सन्दर्भ-ग्रन्थ, विद्यार्थियों के लिए प्रेरणा और जिज्ञासु पाठकों के लिए ज्ञानवर्धक सामग्री सिद्ध होगी। साथ ही, यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भारतीय ज्ञान

परम्परा को दी गई महत्त्वपूर्ण भूमिका के अनुरूप एक सार्थक अकादमिक योगदान भी होगी।

पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय (सांध्य) सदैव गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, शोध और भारतीय मूल्यों के संवर्धन के लिए प्रतिबद्ध रहा है। ऐसे आयोजन महाविद्यालय की उस प्रतिबद्धता को और सुदृढ़ करते हैं। मैं संस्कृत विभाग के समस्त शिक्षकों, सम्मेलन के संयोजक एवं सह-संयोजकों, आयोजन समिति के सदस्यों तथा सभी सहयोगी संस्थाओं का हृदय से अभिनन्दन करती हूँ, जिन्होंने इस विशाल आयोजन को साकार रूप दिया है।

मुख्य रूप से महाविद्यालय की प्राचार्या प्रो. हरिन्द्री चौधरी के संरक्षण और प्रेरणा के बिना यह आयोजन सम्भव नहीं था। मैं उनके प्रति आभार प्रकट करती हूँ। मैं सम्मेलन में सहभागी सभी विद्वानों, वक्ताओं और शोधपत्र-प्रस्तोताओं को भी हार्दिक बधाई देती हूँ व आशा करती हूँ कि उनके विचार भारतीय ज्ञान परम्परा को नई दिशा और नई ऊर्जा प्रदान करेंगे। सम्मेलन एवं स्मारिका की सफलता के लिए मेरी अनेकानेक शुभकामनाएँ।

**प्रो. कृष्णा शर्मा**

पी. जी. डी. ए. वी. कॉलेज (सांध्य)
( दिल्ली विश्वविद्यालय )
P.G.D.A.V. COLLEGE (EVENING)
(UNIVERSITY OF DELHI)

नेहरू नगर, रिंग रोड, नई दिल्ली-110065
दूरभाष : 011-29845214
ई-मेल : principal@pgdave.du.ac.in
वेबसाईट : www.pgdavevecollege.in

IS/ISO 21001:2018 Certified
IS/ISO 14001:2015 Certified

Nehru Nagar, Ring Road, New Delhi-110065
Phone : 011-29845214
E-mail : principal@pgdave.du.ac.in
Website : www.pgdavevecollege.in

पत्रांक संख्या ..........................
Ref. No. ..........................

दिनांक ..........................
Date ..........................

## ब्रिगेडियर ए.के.अदलखा जी

**कोषाध्यक्ष, गवर्निंग बॉडी**

# शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि 15 एवं 16 अक्टूबर, 2026 को भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम विषय पर कला, संस्कृति एवं भाषा विभाग, दिल्ली सरकार, दिल्ली संस्कृत अकादमी, दिल्ली सरकार, संस्कृत विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय (सांध्य) दिल्ली विश्वविद्यालय एवं वैश्विक संस्कृत मंच के संयुक्त तत्त्वावधान में द्विदिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।

वस्तुत: यह मेरा प्रिय विषय है। मैं चाहता हूं कि हमारे पूर्वजों के दिए हुए ज्ञान को हमें संरक्षित करके उसे जनमानस तक पहुंचाना चाहिए। इससे मानवता का भला होगा। यह सम्मेलन इस उद्देश्य की पूर्ति में अपना एक अविस्मरणीय योगदान देने में तत्पर है।

मैं डीएवी परिवार की ओर से महाविद्यालय की प्राचार्या प्रो. हरिन्द्री चौधरी, सम्मेलन के संयोजक डॉ. योगेश शर्मा संस्कृत विभाग के अन्य शिक्षक सह-संयोजकों, आयोजन

समिति के सदस्यों और सहयोगगियों के प्रति आभार प्रकट करता हूं। आप सभी ने सम्मेलन का आयोजन करके स्मारिका प्रकाशित करने का उत्तम व सराहनीय प्रयास किया।

अनेक शुभकामनाएँ।

आपका,

**ब्रिगेडियर ए.के.अदलखा जी**

आज़ादी का अमृत महोत्सव

पी. जी. डी. ए. वी. कॉलेज (सांध्य)
( दिल्ली विश्वविद्यालय )
P.G.D.A.V. COLLEGE (EVENING)
(UNIVERSITY OF DELHI)

विकसित भारत अभियान 1947 TO 2047

नेहरू नगर, रिंग रोड, नई दिल्ली-110065
दूरभाष : 011-29845214
ई-मेल : principal@pgdave.du.ac.in
वेबसाईट : www.pgdavevecollege.in

Nehru Nagar, Ring Road, New Delhi-110065
Phone : 011-29845214
E-mail : principal@pgdave.du.ac.in
Website : www.pgdavevecollege.in

सा विद्या या विमुक्तये

IS/ISO 21001:2018 Certified
IS/ISO 14001:2015 Certified

पत्रांक संख्या ..........................

Ref. No. ..........................

दिनांक ..........................

Date ..........................

## प्रो. हरिन्द्री चौधरी

प्राचार्या

# शुभकामना संदेश

भारतीय ज्ञान परम्परा विश्व की प्राचीनतम और सर्वाधिक समृद्ध ज्ञान-धाराओं में से एक है। वेद, उपनिषद्, दर्शन, व्याकरण, आयुर्वेद, ज्योतिष, स्थापत्य, संगीत और साहित्य के रूप में प्रवाहित यह परम्परा केवल अतीत की धरोहर नहीं, अपितु वर्तमान के लिए पथ-प्रदर्शक और भविष्य के लिए प्रेरणा-स्रोत है। इसकी विशेषता यह है कि इसने ज्ञान को कभी भी केवल बौद्धिक विलास नहीं माना, बल्कि उसे जीवन-मूल्यों, लोक-कल्याण और आत्म-उन्नति से जोड़ा। "सा विद्या या विमुक्तये" की भावना इसी दृष्टि का सार है।

महाविद्यालय के संस्कृत विभाग द्वारा कला, संस्कृति एवं भाषा विभाग, दिल्ली सरकार, दिल्ली संस्कृत अकादमी, दिल्ली सरकार तथा वैश्विक संस्कृत मंच, दिल्ली प्रान्त के सम्मिलित सहयोग से 2 दिन के ज्ञान यज्ञ का आयोजन सफलतापूर्वक किया जा रहा है। मैं महाविद्यालय के साथ सहयोग करने वाली सभी संस्थाओं के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ।

इस द्विदिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के सफल आयोजन के पीछे अनेक प्राध्यापकों का सहयोग व उनका अथक परिश्रम है। इस अवसर पर मैं दिल्ली संस्कृत अकादमी के पदाधिकारी गण, आदरणीय मंत्री जी और सचिव डॉ. शैलेन्द्र कुमार सिंह, वैश्विक संस्कृत मंच के महासचिव - डॉ. राजेश कुमार मिश्र, सम्मेलन संयोजक डॉ. योगेश शर्मा, सह-संयोजक डॉ. तरुण कुमार दीप एवं डॉ. कुलदीप सिंह, आयोजन समिति के अन्य सभी समर्पित प्राध्यापकों और साथियों का हार्दिक स्वागत और अभिनन्दन करती हूं कि उन्होंने सम्मेलन को सफल बनाने में अपना पूर्ण योगदान दिया।

सम्मेलन के मुख्यातिथि, मुख्य वक्ता, विशिष्टातिथि एवं सारस्वत अतिथिगण तथा देश-विदेश से पधारे सभी विद्वान् इस आयोजन की गरिमा बढ़ा रहे हैं। उनका हार्दिक अभिनन्दन।

शोधालेखों का स्मारिका रूप में संकलन मानों विचार-पुष्पों की ऐसी माला है, जो आने वाले समय तक अपनी सुगन्ध बिखेरती रहेगी। मेरी हार्दिक कामना है कि यह स्मारिका जिज्ञासुओं के हृदय में ज्ञान की ज्योति जलाए और हमारी सांस्कृतिक विरासत को नई चेतना प्रदान करे। सभी आयोजकों, विद्वानों एवं पाठकों को मेरी अनन्त शुभकामनाएँ।

**प्राचार्या**
**प्रो. हरिन्द्री चौधरी**

# प्रधान संपादक की कलम से

प्राचीन काल से ही भारत में ज्ञान गंगा प्रवाहित होती रही है। यह ज्ञान की धारा हमारे ऋषि-मुनियों की देन है, जिसे उन्होंने अनुभूत करके मानव जाति के हित हेतु व समाज कल्याण के लिए वेदों, उपनिषदों के माध्यम से हमें धरोहर के रूप में यह ज्ञान प्रदान किया। यह ज्ञान परंपरा सतत चलती रही परंतु काल प्रभाववश पूर्ण तरह तो नहीं अपितु कुछ अंशों में हमें प्राप्त होती है। इसमें भी कुछ तो ज्ञात है और कुछ अज्ञात। इस ज्ञाताज्ञात ज्ञान परंपरा को यदि अनंत काल तक अक्षुण रखना है तो हमें इसके संरक्षण और संवर्धन का प्रयास करना होगा। उसे सुरक्षित करके आने वाली पीढ़ी को देना होगा।जिससे वह भी इस कल्याण मार्ग पर आधारित भारतीय ज्ञान परंपरा का अवगाहन कर सके।

इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर हम 'भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयाम' विषय पर एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन कर रहे हैं। जिनमें योग, आयुर्वेद, गणित, ज्योतिष, अध्यात्म, संस्कृति, शिक्षा, समाज, दर्शन, इतिहास, मनोविज्ञान, भाषाविज्ञान, काव्य, सौन्दर्यशास्त्र, संगीत एवं अन्य भारतीय ज्ञान परम्परा से संबंधित विभिन्न विषयों पर शोध पत्र आमंत्रित किये गए हैं।

वस्तुत: जैसे किसी कार्य के प्रति कोई कारण होता है उसी प्रकार इस सम्मेलन की प्रेरणा के पीछे हमारी महाविद्यालय की प्राचार्या प्रो. हरिन्द्री चौधरी मैम का बार - बार हमें सम्मेलन के आयोजन के प्रति याद दिलाना और प्रेरित करना इस सम्मेलन की सफलता का कारण है। मैं आदरणीया मैम को हृदय से धन्यवाद देना चाहता हूं जिनकी प्रेरणा से यह सम्भव हो पाया।

साथ ही वैश्विक संस्कृत मञ्च के महासचिव और मेरे बड़े भाई समान डॉ. राजेश कुमार मिश्र जी का भी हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने और वैश्विक संस्कृत मञ्च की दिल्ली प्रान्त कोर समिति के समक्ष जैसे ही मैंने मञ्च परिवार के साथ महाविद्यालय में सम्मेलन करवाने का निवेदन किया तो सभी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। इसमें मुख्य रूप से आदरणीय प्रो.

दयाशंकर तिवारी सर, डॉ. कल्पना जी, डॉ. सुचित्रा जी का विशेष सहयोग व मार्गदर्शन रहा। मैं आप सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

जिनका सहयोग निरन्तर अबाध गति से मिलता रहता है ऐसे संस्कृत विभाग के प्रिय साथी डॉ. तरुण कुमार दीप जी और डॉ. कुलदीप सिंह जी आप दोनों का भी धन्यवाद करना अपना सौभाग्य समझता हूं।

मैं दिल्ली सरकार की मुख्यमंत्री आदरणीया श्रीमती रेखा गुप्ता जी, शिक्षा मंत्री आदरणीय श्री कपिल मिश्रा जी, दिल्ली संस्कृत अकादमी के सचिव डॉ. शैलेन्द्र कुमार सिंह जी उनकी पूरी टीम जिनमें विशेष रूप से श्रीमान् राजेश वाजपेई जी, श्रीमान् आशीष जी और कार्यालय के अन्य पदाधिकारियों का प्रत्येक पल पूर्ण सहयोग मिलता रहा। विशेष रूप से दिल्ली सरकार और दिल्ली संस्कृत अकादमी की ओर से हमें जो आंशिक सहयोग प्राप्त हुआ उसके लिए मैं सभी का हृदय से आभार व्यक्त करता हूं। इसके बिना हम आगे बढ़ने में सहायता मिली।

मैं महाविद्यालय की आयोजन समिति का विशेष रूप से धन्यवाद करना चाहता हूँ आप सभी के सहयोग ने सम्मेलन को सफलतापूर्वक सम्पन्न करवाने में योगदान दिया। डॉ. विकास जी का भी अति धन्यवाद! जब भी मुझे सहायता की आवश्यकता हुई इन्होंने मेरी पूरी सहायता की। इसी के साथ मेरे संस्कृत विभाग के प्रिय छात्रों नितेश, आशीष, आंशिक, बिट्टू, मित्रराज, गर्वित, अर्जुन, रौनक, प्रीति, मोनिका, आयूष, कौस्तुभ आदि सभी का भी हार्दिक आभार, आप सभी ने बढ़ चढ़कर सम्मेलन के सफल आयोजन में सहभागिता की।

शोधसारिका (सोविनियर) का प्रकाशन अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है इसको पूर्ण करने में मुख्य रूप से डॉ. राजेश कुमार मिश्र जी आपके अथक प्रयासों, सुझावों और मार्गदर्शन के कारण ही यह सब सम्भव हो पाया है। इसमें वैश्विक संस्कृत मञ्च के पदाधिकारी और सम्पूर्ण टीम के विशेष सहयोग, हमारे संस्कृत विभाग के मित्रद्वय का योगदान भी सराहनीय रहा। डॉ. विकास जी का भी अति धन्यवाद! जब भी मुझे सहायता की आवश्यकता हुई इन्होंने मेरी पूरी सहायता की।

इस अवसर पर मैं श्रीमान् गुरुपद जी को कैसे भूल सकता हूँ? उन्होंने जितना सहयोग

प्रदान किया वह अविस्मरणीय है।

मैं उनके प्रति भी मञ्च परिवार, महाविद्यालय और अकादमी की ओर से धन्यवाद करना अपना धर्म समझता हूँ।

अन्त में महाविद्यालय के अनेक वरिष्ठ आचार्यों, साथियों और कार्यालय के अनेक सहयोगियों का सहयोग मिलता रहा जिनमें विशेष रूप से श्रीमान् दिलवर जी का आभार व्यक्त करना चाहता हूँ जिन्होंने मेरी समय - समय पर सहायता की।

आप सभी का पुनः धन्यवाद।

संगोष्ठी संयोजक

**डॉ. योगेश शर्मा**

**भारतीय ज्ञान परम्परा : हमारी सांस्कृतिक विरासत और समकालीन प्रासंगिकता**

# सम्पादकीय

भारत की पहचान उसकी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और प्राचीन ज्ञान परम्परा से रही है। यहाँ ज्ञान को केवल पुस्तकों तक सीमित नहीं रखा गया, बल्कि उसे जीवन को समझने, सत्य की खोज करने और समाज को सही दिशा देने का माध्यम माना गया। वेदों और उपनिषदों के चिंतन से लेकर बौद्ध एवं जैन दर्शन, भारतीय न्यायशास्त्र, व्याकरण, साहित्य, गणित, खगोलशास्त्र और आयुर्वेद तक ज्ञान की अनेक धाराओं ने भारतीय सभ्यता को समृद्ध बनाया है। इस परम्परा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें जीवन और जगत को समझने के लिए अलग-अलग दृष्टिकोणों को स्थान मिला है।

भारतीय ज्ञान परम्परा का इतिहास केवल उपलब्धियों का इतिहास नहीं, बल्कि निरंतर प्रश्न करने, विचार करने और नए निष्कर्षों तक पहुँचने की यात्रा भी है। यहाँ विभिन्न दार्शनिक मतों के बीच संवाद की परम्परा रही है। किसी ने आत्मा और ब्रह्म के संबंध पर विचार किया, तो किसी ने दुःख, मुक्ति और मानवीय जीवन की समस्याओं को समझने का प्रयास किया। भारतीय दर्शन की विविध धाराएँ इस बात का प्रमाण हैं कि हमारी ज्ञान-परम्परा में तर्क, अनुभव और चिंतन का विशेष महत्त्व रहा है।

इस परम्परा के संरक्षण और विकास में संस्कृत भाषा की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही है। संस्कृत में रचित ग्रन्थों ने दर्शन, साहित्य, व्याकरण, नाट्यकला और विभिन्न ज्ञान-विज्ञान संबंधी विषयों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ाया। पाणिनि का व्याकरण, पतञ्जलि का महाभाष्य और भरतमुनि का नाट्यशास्त्र आज भी अध्ययन और शोध के महत्त्वपूर्ण विषय हैं। इन ग्रन्थों का महत्त्व केवल उनके प्राचीन होने में नहीं, बल्कि उन विचारों और ज्ञान-पद्धतियों में है, जिन्हें उन्होंने व्यवस्थित रूप प्रदान किया। संस्कृत का अध्ययन इस दृष्टि से भी आवश्यक है कि इसके माध्यम से भारतीय बौद्धिक परम्परा के अनेक महत्त्वपूर्ण पक्षों को समझा जा सकता है।

आज जब दुनिया तेजी से बदल रही है, तब भारतीय ज्ञान परम्परा की प्रासंगिकता पर विचार करना और भी आवश्यक हो गया है। आधुनिक विज्ञान और तकनीक ने मानव जीवन को अनेक सुविधाएँ प्रदान की हैं, लेकिन पर्यावरण संकट, सामाजिक असमानता और नैतिक मूल्यों से जुड़ी चुनौतियाँ आज भी हमारे सामने हैं। भारतीय चिंतन में निहित करुणा, सहअस्तित्व, संयम और लोककल्याण की भावना इन समस्याओं पर विचार करने के लिए उपयोगी दृष्टिकोण प्रदान कर सकती है। साथ ही, अपनी परम्परा को समझने के लिए आवश्यक है कि हम उसका अध्ययन खुले मन से करें और उसके विचारों का मूल्यांकन तर्क, प्रमाण तथा आधुनिक शोध के आधार पर करें।

इसी संदर्भ में 'भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम' विषय पर आयोजित द्विदिवसीय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन का विशेष महत्त्व है। दिल्ली सरकार के कला, संस्कृति एवं भाषा विभाग, दिल्ली संस्कृत अकादमी, वैश्विक संस्कृत मञ्च, दिल्ली प्रान्त एवं संस्कृत विभाग तथा पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित यह सम्मेलन भारतीय ज्ञान-संपदा के विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श का अवसर प्रदान करता है। ऐसे आयोजन विद्वानों, शिक्षकों और शोधार्थियों को एक साझा मंच पर लाते हैं, जहाँ वे अपने विचार प्रस्तुत करने के साथ-साथ एक-दूसरे के अनुभवों और शोध से भी लाभान्वित होते हैं।

किसी भी अकादमिक सम्मेलन की सार्थकता केवल विचारों के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं होती। उसका वास्तविक उद्देश्य ऐसे विचारों और अनुसंधानों को प्रोत्साहित करना भी है, जिनसे आगे के लिए नए रास्ते खुलें। भारतीय ज्ञान परम्परा के संदर्भ में प्राचीन पाण्डुलिपियों का संरक्षण, शास्त्रीय ग्रन्थों का प्रामाणिक संपादन, सरल एवं विश्वसनीय अनुवाद तथा नए शोधार्थियों को अवसर प्रदान करना विशेष रूप से आवश्यक है। इसके साथ ही, पारम्परिक ज्ञान को आधुनिक शिक्षा और वैश्विक अकादमिक विमर्श से जोड़ने की दिशा में भी निरंतर प्रयास किए जाने चाहिए।

भारतीय ज्ञान परम्परा हमारी सांस्कृतिक पहचान का महत्त्वपूर्ण आधार है, लेकिन इसकी वास्तविक शक्ति केवल अतीत के गौरव में नहीं, बल्कि वर्तमान को दिशा देने की

क्षमता में निहित है। किसी भी परम्परा को जीवित रखने के लिए उसका अध्ययन करना, उसके विचारों को समझना और समय की आवश्यकताओं के अनुरूप उनका विवेकपूर्ण उपयोग करना आवश्यक है। आशा है कि यह अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन भारतीय ज्ञान-संपदा के विविध आयामों पर नए विमर्श को प्रोत्साहित करेगा तथा शोध, शिक्षा और सांस्कृतिक संवाद के क्षेत्र में सार्थक योगदान देगा। अतीत के ज्ञान को वर्तमान की चेतना से जोड़कर ही हम भविष्य के लिए एक सुदृढ़ और समृद्ध बौद्धिक आधार तैयार कर सकते हैं।

राजेशकुमार

**डॉ. राजेश कुमार मिश्र**
सहायक आचार्य, नव नालन्दा महाविहार
संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार
महासचिव, ग्लोबल संस्कृत फोरम एवं ग्लोबल विदुषी फोरम

# विषयसूची


| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | योगः आयुर्वेदश्च: समन्वितस्वास्थ्यदृष्टेः एकः समीक्षात्मकः अध्ययनः | Nileshaben M. Jani | 1 |
| 2. | गणितशास्त्रेण सह ज्योतिर्विद्यायाः संयोगः गवेषिका- | अन्वेषामण्डलः | 2 |
| 3. | ज्ञानपरम्परादिशा श्रीव्रजकिशोरत्रिपाठि-विरचिते मातृभूमिचरिते भारतीयोत्कलसंस्कृतेश्च परिशीलनम् | द्वितीकृष्ण पाणिग्राही | 2 |
| 4. | भारतीयज्ञानपरम्परायाः विविधाः आयामाः शिक्षा समाजश्च | डॉ. अशोककुमारषडङ्गी | 3 |
| 5. | स्वामीविवेकानन्दस्य चिन्तने भारतीयज्ञानपरम्परा: समकालीनसन्दर्भे एकमध्ययनम् | Manosmin Nayak | 3 |
| 6. | किरातार्जुनीये अध्यात्म-संस्कृतेः स्वरूपम् : एकमनुशीलनम् | डॉ. टिकेराममिश्रः | 5 |
| 7. | संस्कृतभाषायाः उपयोगिता एवं महत्त्वम् | डॉ. अभिलाषा कुमारी | 5 |
| 8. | प्राचीनसंस्कृतग्रन्थेषु पृथिवीवर्णनम् | डॉ. श्री. वैभव दातारः | 6 |
| 9. | श्रीमद्भागवतपुराणे तद्धितप्रत्ययानां प्रयोगः पाणिनीयव्याकरणस्य भारतीयज्ञानपरम्परायाश्च परिप्रेक्ष्ये एकमध्ययनम् | गोलेनुर खातूनः | 7 |
| 10. | “प्रमुखोपनिषद्दर्शन-शङ्करदेवदर्शनयोः वर्णितं प्रकृतितत्त्वस्य तुलनात्मकमध्ययनम्” | पिङ्कु कलिता एवं डॉ. बर्णाली बरठाकुरः | 8 |
| 11. | योगायुर्वेदयोः स्वास्थ्यतत्त्वमीमांसा- देहमनःसमन्वयस्य चिकित्साशास्त्रीयाध्ययनम् | डॉ. ए. रामकृष्णः | 9 |
| 12. | द्राह्यायण श्रौतसूत्र का संरचनात्मक अध्ययन | अमितांशु | 10 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 13. | भारतीय ज्ञान परम्परा और कौटिल्य का अर्थशास्त्र | डॉ. राजेश कुमार | 11 |
| 14. | भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयाम | Kiran Bala | 14 |
| 15. | स्वामी दयानन्द के अनुसार पारम्परिक पद्धति | दीपक सरकार | 15 |
| 16. | भारतीय ज्ञान परम्परा अवधारणा एवं वैशिष्टय:<br>(उपनिषद् साहित्य के सन्दर्भ में) | डॉ. उमेश चन्द्र जोशी | 16 |
| 17. | भारतीय ज्ञान परम्परा में गुरु-शिष्य सम्बन्ध: नैतिकता एवं उत्तरदायित्व का समकालीन पुनर्पाठ | मानवी | 17 |
| 18. | भारतीय ज्ञान-परम्परा और सतत् विकास: वैदिक चिन्तन की समकालीन प्रासंगिकता | डॉ. अमित शर्मा | 18 |
| 19. | समग्र स्वास्थ्य एवं जीवन-गुणवत्ता के विकास में योग की भूमिका: आधुनिक संदर्भ में एक अध्ययन | डॉ. सुनीता अटल | 19 |
| 20. | भास विरचित प्रतिमा नाटक में रामायणेतर निजी कवि कल्पनाएं | डॉ. मनोहर लाल सुथार | 20 |
| 21. | अध्यात्म और संस्कृति के समन्वय से नागरिकता का विकास:<br>भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन | डॉ. रोहताश एवं डॉ. सुमन | 21 |
| 22. | भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयाम और जन-माध्यम के रूप में हिन्दी: संरक्षण, संवर्धन और वैश्विक भूमिका | डॉ. यल. कोमुरा रेड्डी | 22 |
| 23. | जगदीश चन्द्र बोस और भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा | Dr. Arvind Kumar | 24 |
| 24. | भारतीय ज्ञान परंपरा में अर्थ-चिंतन: कौटिल्यीय 'वार्ता' और आधुनिक सतत विकास (SDGs) | गायत्री जोशी | 25 |
| 25. | भारतीय ज्ञान परम्परा में अध्यात्म और नैतिक जीवन: आत्मबोध से लोकमंगल तक | नरेन्द्र कुमार पितलियाँ | 26 |
| 26. | प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धतत की प्रासङ्गिकता | डॉ. हेम चन्द्र | 27 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 27. | भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में आरोग्य-विचार | डॉ. समय सिंह मीणा एवं डॉ. गोपाल लाल सालवी | 27 |
| 28. | अतिसारनिदान का सम्पादन, अनुवाद एवं समीक्षात्मक अध्ययन | कमल रानी | 28 |
| 29. | गीता एवं आयुर्वेद - एक भावार्थ - मिलन - समग्र स्वास्थ्य | ओम प्रकाश अवस्थी MABGS | 29 |
| 30. | पुरुषोत्तम मास की उपयोगिता | नितेश कुमार गुप्ता | 30 |
| 31. | प्राचीन भारतीय विमानशास्त्र: उद्भव, तकनीकी संरचना एवं वैज्ञानिक दृष्टि | अपराजिता अंशु एवं अमित मुरारि | 31 |
| 32. | शिक्षा-वेदाङ्ग और वर्तमान शिक्षा-पद्धति का तुलनात्मक अध्ययन | डॉ. प्रमा द्विवेदी | 32 |
| 33. | हिंदी साहित्य में भारतीय जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति: परम्परा से आधुनिकता तक | डॉ. छाया | 34 |
| 34. | स्वर्णिम भारत के नवनिर्माण में बौद्ध दर्शन के सिद्धांतों की भूमिका | मोनिका एवं डॉ. सत्यानन्द | 36 |
| 35. | ज्योतिषीय सिद्धांतो में यमल शिशु | अंकित कुमार | 37 |
| 36. | भारतीय ज्ञान परम्परा में योग: एक दार्शनिक एवं सांस्कृतिक अनुशीलन | डॉ. सीमा रानी | 38 |
| 37. | भारतीय ज्ञान परंपरा में नैतिकता: बौद्ध दर्शन के विशेष संदर्भ में। | Dr. Puran Kumar Saw | 39 |
| 38. | भारतीय ज्ञान परंपरा मे गणित | डॉ. कुसुमलता रजक | 41 |
| 39. | सांख्य दर्शन में प्रकृति-तत्त्व का पर्यावरणीय अध्ययन | प्रियंका एवं डॉ. टी० आर० भौरिया | 41 |
| 40. | भारतीय ज्ञान परंपरा में मानवीय मूल्यों की अवधारणा: उपनिषदों के विशेष संदर्भ में | डॉ. आरती यादव | 43 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 41. | भारतीय ज्ञान परंपरा के विभिन्न आयामों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विवेचन | डॉ. संजीव प्रसाद भट्ट | 44 |
| 42. | योग दर्शन में निहित मूल्यपरक संवेदनाएँ: स्वच्छ पर्यावरण एवं स्वस्थ परिवेश के संदर्भ में | डॉ. जगनारायण मिश्र | 46 |
| 43. | काव्य-सौंदर्य: स्वरूप, तत्त्व एवं अभिव्यक्ति | Anand Balwada | 48 |
| 44. | चरकसंहिता में वर्णित ऋतुचर्या एवं स्वास्थ्य-संरक्षण | डॉ. मंजू पाण्डे | 49 |
| 45. | विनय-पत्रिका में दार्शनिक चिंतन और उपनिषदीय परंपरा | डॉ. आनंद कुमार | 50 |
| 46. | रस-सिद्धांत के संदर्भ में रीतिकालीन कवियों के काव्य में प्रकृति का उद्दीपन विभाव रूप (विशेष संदर्भ बिहारी, देव और पद्माकर) | विकास शर्मा | 51 |
| 47. | भारतीय ज्ञान परंपरा की मूल अवधारणाएँ एवं विशेषताएँ : एक दार्शनिक अध्ययन | Dr. Surendra Kumar Maurya | 52 |
| 48. | भारतीय ज्ञान परम्परा के पुनर्जागरण में वैदिक ज्योतिर्विद्या के पुनर्पाठ की अनिवार्यता | डॉ. राजीव रंजन | 53 |
| 49. | धर्म-विज्ञान और भारत | डॉ. गोपीराम शर्मा | 55 |
| 50. | शब्द से रस तक: भारतीय ज्ञान परंपरा में भाषिक सौंदर्य और डिजिटल युग की काव्य-संवेदना का अंतर्संबंध | डॉ. रूचि पालीवाल | 56 |
| 51. | शैक्षिक सुधारों की आवश्यकता: मूल्यपरक शिक्षा, शिक्षक स्वायत्तता एवं राष्ट्रबोध का परिप्रेक्ष्य | डॉ. संजीव कुमार बंसल एवं डॉ. भूपेंद्र कुमार महेंद्रा | 57 |
| 52. | भारतीय संस्कृति में प्रकृति संरक्षण का वैज्ञानिक संदेश: | डॉ. विष्णुदत्त तिवारी | 58 |
| 53. | समकालीन वैश्विक संकट और भारतीय दर्शन की व्यावहारिक प्रासंगिकता: एक समालोचनात्मक अनुशीलन | कृष्णा व्यास जोशी | 61 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 54. | भारतीय ज्ञान परम्परा में वैश्विक दृष्टि (वेदों के विशेष सन्दर्भ में) | डॉ. पूजा सिंह | 62 |
| 55. | ग्रामीण विकास में विज्ञान, शिक्षा और प्रौद्योगिकी की भूमिका का अध्ययन | डॉ. बरखा घावरी | 63 |
| 56. | भारतीय ज्ञान परम्परा का शैक्षिक आयाम | मीनाक्षी सिंह रावत | 64 |
| 57. | CONCEPT OF TRIGUNA SIDDANTHA AND ITS APPLIED ASPECTS | Dr. S. Mahalakshmi | 65 |
| 58. | Yoga and Neuroplasticity: A Convergent-Demand Model | Dr. Saanvi Chaudhary (MD acupressure) | 65 |
| 59. | The Inner Sovereign: Reflections of Adhyātma in Kautilya's Arthaśāstra | Hitesh Jadav | 66 |
| 60. | The Historical Evolution of Traditional Knowledge in India: Society, Culture and Continuity | Raeesah Amin | 66 |
| 61. | Indian Knowledge Systems in Indian Economics: A Critical Look at the National Education Policy 2020 | Dr. Neelam kapoor | 67 |
| 62. | CULTURAL RESURGENCE OF VEDIC ASTROLOGY UNDER CONTEMPORARY KNOWLEDGE SYSTEM | Dr. P.Radhakrishnan | 68 |
| 63. | Rethinking Ladakh's Geopolitical Significance through the lens of Indian Knowledge System | Padma Angmo | 69 |
| 64. | Knowledge, Territory and Power: Reinterpreting Ladakh's Geostrategic Significance through Indian Knowledge Systems. | Nikhil Kumar Rai | 70 |
| 65. | Indian Traditional Knowledge System for Education: The vision of Viksit @ 2047 – A Discourse on Policy Pedagogy Challenges in 21st Century | Dr. Munna Lal Yadav | 70 |
| 66. | The Integrated Mind: A Holistic Model of Cittavṛtti Regulation and Mind Management in the Yoga Vāsiṣṭha | Dr. Arpit Kumar Dubey | 71 |
| 67. | Swami Dayanand Saraswati: A Propagator of the Indian Knowledge Tradition | Dr. Meghna Sharma | 73 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 68. | Nanda Devi: Presiding Protector of the India-China border in Uttarakhand. | Dr. Bhagwati Prasad Purohit | 74 |
| 69. | TRADITIONAL ACCOUNTING PRACTICES IN BHARAT: PRECURSOR TO MODERN FIELD OF ACCOUNTANCY | Dr. Sarthak Gupta | 76 |
| 70. | The Moral Status of Animals in the Manusmṛti: An Indian Knowledge System Approach to Animal Personhood | Prasad Satyawan Dhuri | 76 |
| 71. | Mapping 'Vande Mataram' in Chattopadhyay, Aurobindo, and Nivedita | Dr. Priyanka Vaidya | 77 |

# Abstract

# योगः आयुर्वेदश्चः समन्वितस्वास्थ्यदृष्टेः एकः समीक्षात्मकः अध्ययनः

Nileshaben M. Jani

भाषा साहित्य भवन, गुजरात युनिवर्सिटी, नवरंगपुरा, अहमदाबाद

**सारांशः-**

योगः आयुर्वेदश्च भारतस्य प्राचीनज्ञानपरम्परायाः महत्त्वपूर्णौ विषयौ स्तः। उभयोः मुख्यः उद्देश्यः मानवस्य शारीरिकं, मानसिकं च स्वास्थ्यं रक्षितुम् अस्ति। आयुर्वेदे स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणं तथा रोगिणः रोगस्य प्रशमनं मुख्यं प्रयोजनम् अस्ति। योगे शरीरस्य, मनसः, श्वासस्य च नियन्त्रणस्य महत्त्वं दृश्यते।

आयुर्वेदे आहारः, विहारः, दिनचर्या, ऋतुचर्या, निद्रा, व्यायामः, सद्वृत्तम् इत्यादीनां महत्त्वं वर्णितम् अस्ति। योगे यमः, नियमः, आसनम्, प्राणायामः, प्रत्याहारः, धारणा, ध्यानम्, समाधिः च अष्टौ अङ्गानि सन्ति।

अद्यतनकाले मनुष्यः तनावेन, निद्राविकारेण, स्थूलतया, मधुमेहेन, उच्चरक्तचापेन च पीडितः भवति। अतः स्वास्थ्यरक्षणाय योगस्य आयुर्वेदस्य च समन्वितः उपयोगः महत्त्वपूर्णः भवितुम् अर्हति। अस्मिन् शोधपत्रे योगस्य आयुर्वेदस्य च सिद्धान्तानां, स्वास्थ्यरक्षणे तयोः भूमिकायाः, आहारस्य, दिनचर्यायाः, प्राणायामस्य, ध्यानस्य च समीक्षात्मकः अध्ययनः क्रियते।

**मुख्यशब्दाः-** योगः, आयुर्वेदः, स्वास्थ्यं, प्राणायामः, आसनम्, ध्यानम्, दिनचर्या, आहारः, जीवनशैली, स्वास्थ्यरक्षणम्।

# गणितशास्त्रेण सह ज्योतिर्विद्यायाः संयोगः

गवेषिका-अन्वेषामण्डलः
विद्यावारिधिः, राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालयः, तिरुपतिः

**भूमिकाः-**

गणितं खगोलशास्त्रस्य मौलिकं भवति, ब्रह्माण्डस्य अवगमनाय, प्रतिरूपणाय च साधनानि प्रदाति। प्राचीनसभ्यताभ्यः आरभ्य आधुनिकखगोलभौतिकशास्त्रपर्यन्तं आकाशघटनानां अवलोकनार्थं, गणनायां, पूर्वानुमानार्थं च गणितीयसिद्धान्ताः महत्त्वपूर्णाः अभवन्।

# ज्ञानपरम्परादिशा श्रीव्रजकिशोरत्रिपाठि-विरचिते मातृभूमिचरिते भारतीयोत्कलसंस्कृतेश्च परिशीलनम्

**द्वितीकृष्ण पाणिग्राही**
साहित्य विभाग, महाराजा श्रीरामचन्द्रभञ्ज देओ विश्वविद्यालयः,
Sriram Chandra vihar, Baripada

**प्रस्तावनाः-**

आबहुकालात् या सनातनवैदिकधर्मपरम्परा आसीत् ताः सर्वाः अपि भारतीयज्ञानपरम्परायाः अङ्गभूताः भवन्ति। भारतीयाः नानाधर्म नानासम्प्रदायेषु विभक्ताश्चेदपि सर्वेषाम् एकस्यैव लक्ष्यं भवति यत् परमात्मनः सानिध्यम्। साम्प्रतिके ससाजे कवयः विविधकाव्यं निर्माय नानाधर्मसम्प्रदायेषु एकत्वस्य भावनायाः बीजं रोपयन्ति। एतस्मिन् मार्गे कविवरः श्रीव्रजकिशोरत्रिपाठिवर्याः मातृभूमिचरितम् काव्यमेकं व्यरचि। अस्य कवेः निर्मितमातृभूमिचरितकाव्ये भारतीयज्ञानपरम्परायाः विषये बहुत्रस्थलेषु प्राप्यन्ते। अत्र भारतीयज्ञानपरम्परारूपेण कविना अक्षयतृतीया, दीपावलिः, रजपर्व, होलिखेलः, पितृश्राद्धः, मकरसंक्रमणादि पर्वाणां भारतीयज्ञानपरम्परायाः आधाररूपेण विरचितः वर्तते।

## भारतीयज्ञानपरम्परायाः विविधाः आयामाः शिक्षा समाजश्च

**डॉ. अशोककुमारषडङ्गी**

संस्कृत-शिक्षकः, कन्धमालः, ओडिशा

**सारांशः-**

अस्मिन् शोधपत्रे भारतीयज्ञानपरम्परायाः मुख्यौ द्वावायामौ—'शिक्षा' तथा 'समाजः' इति अधिकृत्य विशदः तुलनात्मकः समीक्षणात्मकश्च विचारः विहितः। भारतीयज्ञानपरम्परा न केवलं कस्याश्चिद् एकाक्याः विचारधारायाः सम्प्रदायस्य वा परिधौ सिद्धा, अपितु मानवाभ्युदयाय (अभ्युदय) निःश्रेयसाय (मोक्ष) च समेषां जीवनमूल्यानां सूक्ष्मं वैज्ञानिकं च विश्लेषणं प्रस्तौति। अस्मिन् पत्रे प्राचीनायाः गुरुकुलशिक्षणपद्धत्याः modern pedagogical-पद्धतीनां च तुलनात्मकम् अध्ययनं प्रस्तुतम्। तथैव पाणिनीयव्याकरणस्य भाषावैज्ञानिकता, वैशेषिकादीनां शास्त्राणां भौतिकविज्ञाने, मौलिकम् अवदानम्, चरकसंहिता-सुश्रुतसंहितयोः आरोग्यविज्ञानं च वैज्ञानिकदृष्ट्या समूढम्। सामाजिकक्षेत्रे 'वसुधैव कुटुम्बकम्' इति विश्वबन्धुत्वम्, 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' इति वैदिकादर्शानुसारं पर्यावरण-संरक्षणं, चरित्रनिर्माणम्, तथा च राष्ट्रिय-शिक्षा-नीतेः (NEP 2020) आलोकस्य प्रासंगिकता सविस्तरं प्रतिपादिता।

**कुञ्चिका-शब्दाः-** भारतीयज्ञानपरम्परा। गुरुकुलशिक्षणपद्धतिः। पाणिनीयव्याकरणम् भाषाविज्ञानञ्च। वैशेषिक-परमाणुवादः। वसुधैव कुटुम्बकम्। पारिस्थितिकी-सन्तुलनम्। राष्ट्रिय-शिक्षा-नीतिः-२०२०

## स्वामीविवेकानन्दस्य चिन्तने भारतीयज्ञानपरम्परा: समकालीनसन्दर्भे एकमध्ययनम्

**Manosmin Nayak**

**शोधसारः-**

भारतीयज्ञानपरम्परा भारतस्य प्राचीनसंस्कृतेः महत्त्वपूर्णः आधारः अस्ति। भारतीयपरम्परायां ज्ञानस्य अर्थः केवलं पुस्तकेभ्यः सूचनानां प्राप्तिः नास्ति। ज्ञानं मनुष्यस्य

जीवनं संस्करोति, तस्य विचारान् परिष्करोति तथा तं नैतिकमार्गे प्रेरयति। वेदाः, उपनिषदः, भगवद्गीता, रामायणम्, महाभारतम्, दर्शनशास्त्राणि च भारतीयज्ञानपरम्परायाः प्रमुखाः स्रोतांसि सन्ति। अस्याः परम्परायाः मुख्यः उद्देश्यः मनुष्यस्य सर्वाङ्गीणविकासः अस्ति।

स्वामीविवेकानन्दः भारतीयज्ञानपरम्परायाः प्रमुखेषु आधुनिकव्याख्यातृषु अन्यतमः आसीत्। तेन भारतीयदर्शनस्य, विशेषतः वेदान्तस्य, विचाराः सरलरूपेण जनसामान्यस्य समक्षं प्रस्तुताः। तस्य चिन्तने आत्मविश्वासः, आत्मशक्तिः, कर्मयोगः, मानवसेवा, चरित्रनिर्माणम्, शिक्षा तथा राष्ट्रभावना इत्यादयः विषयाः विशेषं स्थानं धारयन्ति। विवेकानन्दस्य मतानुसारं प्रत्येकस्मिन् मनुष्ये अन्तर्निहिता शक्तिः अस्ति। शिक्षायाः कार्यं तस्याः शक्तेः विकासः अस्ति।

विवेकानन्दः मानवसेवां महत्त्वपूर्णं कार्यं मन्यते स्म। तस्य दृष्ट्या मानवस्य सेवा केवलं सामाजिककार्यं न, अपितु आध्यात्मिकजीवनस्य अपि एकः मार्गः अस्ति। कर्मयोगस्य माध्यमेन मनुष्यः निःस्वार्थभावेन कर्म कर्तुं शक्नोति। एवं तस्य विचाराः व्यक्तिजीवनस्य विकासेन सह समाजस्य विकासाय अपि उपयोगिनः भवन्ति।

अद्यतनकाले विज्ञानस्य प्रौद्योगिक्याश्च तीव्रविकासः अभवत्। मानवस्य जीवनं पूर्वापेक्षया अधिकं सुविधापूर्णं जातम्, तथापि मानसिकतनावः, असन्तोषः, स्वार्थभावना, सामाजिकविभाजनम् इत्यादयः समस्याः अपि वर्धिताः सन्ति। अस्मिन् सन्दर्भे विवेकानन्दस्य विचाराः विशेषरूपेण प्रासंगिकाः भवन्ति। आत्मविश्वासः, नैतिकता, सेवा, अनुशासनम् तथा मानवतायाः भावना आधुनिकजीवने अपि आवश्यकाः सन्ति। अतः प्रस्तुतशोधपत्रे स्वामीविवेकानन्दस्य चिन्तने भारतीयज्ञानपरम्परायाः स्वरूपं तथा समकालीनजीवने तस्याः प्रासंगिकता विविच्यते।

बीजशब्दाः- भारतीयज्ञानपरम्परा, स्वामीविवेकानन्दः, वेदान्तः, कर्मयोगः, शिक्षा, मानवसेवा, आत्मविश्वासः, चरित्रनिर्माणम्।

# किरातार्जुनीये अध्यात्म-संस्कृतेः स्वरूपम् : एकमनुशीलनम्

**डॉ. टिकेराममिश्रः**
राष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः, तिरुपतिः (आ.प्र)

**शोधसारः-**

महाकविभारविप्रणीतं ‘किरातार्जुनीयम्’ केवलं राजनीति-वीररस-चित्रकाव्यादिभिः समृद्धं महाकाव्यं न, अपि तु भारतीय-अध्यात्म-संस्कृतेः उत्कृष्टः समन्वयग्रन्थः अस्ति। बाह्यदृष्ट्या अत्र पाण्डवानां राज्यप्राप्त्यर्थम् अर्जुनस्य पाशुपतास्त्रप्राप्तिरूपं लौकिकं लक्ष्यं दृश्यते, किन्तु आन्तरिकदृष्ट्या इदं महाकाव्यं जीवात्मनः परमात्मना सह ऐक्यस्य, इन्द्रियजयस्य, निष्कामकर्मयोगस्य, शैवदर्शनस्य च पारमार्थिकं रहस्यमुद्घाटयति। अस्मिन् शोधपत्रे किरातार्जुनीयस्य प्रकाशे तपसः तात्त्विकस्वरूपम्, इन्द्रियनिग्रहस्य अनिवार्यता, कामक्रोधयोरुपरि विजयः, तथा च ‘नर-नारायण’ सम्बन्धरूपेण जीवात्म-परमात्मनोः अद्वैतानुभूतिः सम्यक्तया समीक्ष्यते।

# संस्कृतभाषायाः उपयोगिता एवं महत्त्वम्

**डॉ. अभिलाषा कुमारी**

**शोधसारः-**

संस्कृतभाषा भारतस्य प्राचीनतमा भाषा अस्ति। अस्याः भाषायाः व्याकरणं अत्यन्तं वैज्ञानिकम् अस्ति। संस्कृतभाषायां शब्दनिर्माणस्य नियमाः अत्यन्तं स्पष्टाः सन्ति। अतः संस्कृतभाषा वैज्ञानिकदृष्ट्या अपि महत्त्वपूर्णा अस्ति।

संस्कृतभाषायां साहित्यस्य विशालः भण्डारः अस्ति। अस्यां भाषायां काव्यानि, नाटकानि, कथाः तथा विविधाः ग्रन्थाः रचिताः सन्ति। संस्कृतसाहित्ये मानवजीवनस्य

विविधाः भावाः सुन्दररूपेण वर्णिताः सन्ति। कालिदासस्य काव्यानि तथा नाटकानि संस्कृतसाहित्यस्य गौरवं वर्धयन्ति। संस्कृतभाषायां धार्मिकं ज्ञानम् अपि निहितम् अस्ति। वेदाः, उपनिषदः, पुराणानि, रामायणम्, महाभारतम् तथा भगवद्गीता इत्यादयः महान् ग्रन्थाः संस्कृतभाषायां एव रचिताः सन्ति। एतेषु ग्रन्थेषु मानवजीवनस्य नैतिकमूल्यानां, कर्तव्यस्य तथा सदाचारस्य उपदेशः प्राप्यते। भारतीयसंस्कृतेः मूलं संस्कृतभाषायां निहितम् अस्ति। जन्मतः मृत्युपर्यन्तं भारतीयजीवने अनेकाः संस्काराः संस्कृतमन्त्रैः सम्पन्नाः भवन्ति। वेदाः, पुराणानि तथा उपनिषदः अस्माकं धार्मिकजीवनस्य आधाराः सन्ति। अतः संस्कृतभाषा केवलं प्राचीनभाषा नास्ति, अपितु अस्माकं संस्कृतेः, परम्परायाः तथा ज्ञानस्य महत्त्वपूर्णः आधारः अस्ति। संस्कृतिः राष्दः संस्कृत शब्दे नेव निःसृतः यस्यार्थों मवति। सम-कृतः सम्यक-कृतः, सुष्ठु कृतः, साधु-कृतः साधु-

## प्राचीनसंस्कृतग्रन्थेषु पृथिवीवर्णनम्

**डॉ. श्री. वैभव दातारः**

**शोधसारः-**

अनादिकालात् एव मनुष्यस्य आकाशस्थेषु ग्रहगोलकेषु जिज्ञासा वर्तते। अस्माकं पृथ्वी कथं भ्रमति, कीदृशी दृश्यते इत्यादीनां विषयाणाम् अन्वेषणं मनुष्येण सहस्रवर्षेभ्यः क्रियमाणम् अस्ति। अस्याः पृथिव्याः आकारः कीदृशः स्यात्? सा गोलाकारा अस्ति उत समतला? इत्यादीनां प्रश्नानाम् उत्तराणि ज्ञातुं मनुष्येण निरन्तरं प्रयत्नः कृतः।

आधुनिककाले विविधदूरदर्शकयन्त्राणां कृत्रिमोपग्रहाणां च साहाय्येन वयं पृथिव्याः वास्तविकं चित्रं द्रष्टुं शक्नुमः। परन्तु सहस्रवर्षेभ्यः पूर्वम् अपि अस्माकं संस्कृतग्रन्थेषु पृथिव्याः स्वरूपस्य विस्तृतं वर्णनं कृतम् अस्ति। पृथ्वी गोलाकारा अस्ति, न तु समतला, इति विषयस्य उल्लेखः संस्कृतग्रन्थेषु प्राप्यते। तथैव पृथिव्याः परिवलनं, परिभ्रमणम् इत्यादयः अनेकाः खगोलशास्त्रीयाः विषयाः अपि अस्माकं संस्कृतग्रन्थेषु समाविष्टाः सन्ति।

अस्य शोधपत्रस्य अध्ययनेन पाठकाः संस्कृतग्रन्थेषु वर्णितस्य पृथिव्याः स्वरूपस्य तथा तस्याः गतीनां विषये ज्ञानं प्राप्स्यन्ति। तेन सह भारतीयज्ञानपरम्परायाः प्राचीनता, समृद्धता तथा वैज्ञानिकदृष्टेः वैशिष्ट्यम् अपि अवगन्तुं शक्यते।

**कूटशब्दाः**- पृथ्वीगोलः, भूमण्डलम्, आर्यभटः, श्रीमद्भागवतम्।

# श्रीमद्भागवतपुराणे तद्धितप्रत्ययानां प्रयोगः पाणिनीयव्याकरणस्य भारतीयज्ञानपरम्परायाश्च परिप्रेक्ष्ये एकमध्ययनम्

**गोलेनुर खातूनः**

अनुसन्धात्री, राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालयः तिरूपतिः आन्ध्रप्रदेशः

**सारांशः-**

अस्मिन् शोधपत्रे श्रीमद्भागवतपुराणे प्रयुक्तानां चयनिततद्धितान्तशब्दानां पाणिनीयव्याकरणस्य आधारेण अध्ययनं कृतम्। तद्धितप्रत्ययाः प्रातिपदिकेभ्यःविशिष्टार्थकशब्दानां निर्माणं कुर्वन्ति। अपत्यं, वंशः, सम्बन्धः, गुणः, स्वामित्वम् इत्यादीनां विविधार्थानां प्रकाशने तेषां महत्त्वपूर्णा भूमिका अस्ति। 'यादवः', 'पाण्डवः', 'कौरवः', 'राघवः', 'कौन्तेयः', 'वासुदेवः', 'भगवत्' इत्यादीनां शब्दानां व्याकरणिकं तथा सांस्कृतिकं विश्लेषणं कृतम्। अध्ययनात् ज्ञायते यत् तद्धितप्रत्ययाः केवलं शब्दरूपनिर्माणस्य साधनानि न, अपितु भारतीयवंशपरम्परायाः, सामाजिकसम्बन्धानां, सांस्कृतिकस्मृतेः तथा धार्मिकचिन्तनस्य भाषिकवाहकाः अपि सन्ति। अतः श्रीमद्भागवतस्य तद्धितव्यवस्थायाः अध्ययनं भारतीयज्ञानपरम्परायाः समग्रबोधाय महत्त्वपूर्णं साधनं भवति।

बीजशब्दाः- श्रीमद्भागवतम्, तद्धितप्रत्ययाः, पाणिनीयव्याकरणम्, शब्दनिर्माणम्, अपत्यम्, वंशपरम्परा, सांस्कृतिकज्ञानम्, भारतीयज्ञानपरम्परा, IKS, संस्कृतभाषा।

# प्रमुखोपनिषद्दर्शन-शङ्करदेवदर्शनयोः वर्णितं प्रकृतितत्त्वस्य तुलनात्मकमध्ययनम्

**पिङ्कु कलिता एवं डॉ. बर्णाली बरठाकुरः**

शोधछात्रः, संस्कृतवेदाध्ययनविभागः, सहायकाचार्या

कुमारभास्करवर्मसंस्कृत-पुरातनाध्ययनविश्वविद्यालयः, नमाटिः, असमः

**सारांशः-**

प्रकृतितत्त्वं भारतीयदर्शनपरम्परायाः महत्त्वपूर्णेषु विचारविषयेषु अन्यतममस्ति। प्रस्तुतशोधपत्रे प्रमुखोपनिषद्दर्शन-श्रीमन्तशङ्करदेवदर्शनयोः प्रतिपादितस्य प्रकृतितत्त्वस्य तुलनात्मकमध्ययनं क्रियते। अस्य अध्ययनस्य मुख्योद्देश्यं प्रमुखोपनिषत्सु जगतः मूलकारणम्, प्रकृतिः, माया, जीवः तथा परमसत्ता इत्येतेषां परस्परसम्बन्धस्य परीक्षणं कृत्वा शङ्करदेवस्य वैष्णवदर्शने तेषां तत्त्वानां स्वरूपं तुलनात्मकदृष्ट्या विवेचयितुमस्ति। छान्दोग्योपनिषदि 'सत्', तैत्तिरीयोपनिषदि आत्मनः सकाशात् सृष्टेः क्रमिकविकासः, कठोपनिषदि 'अव्यक्तम्' तथा श्वेताश्वतरोपनिषदि माया-प्रकृति-महेश्वरसम्बन्धः प्रकृतिविचारस्य विविधरूपाणि प्रकाशयन्ति। विशेषतः श्वेताश्वतरोपनिषदः "मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्" इति प्रतिपादनं प्रस्तुततुलनायाः महत्त्वपूर्णं दार्शनिकाधारं भवति। शङ्करदेवस्य दर्शनस्य परीक्षणे प्रकृतिः स्वतन्त्रा परमसत्ता न भूत्वा परमेश्वराधीनया मायाशक्त्या, सृष्टिप्रक्रियया तथा जीवस्य संसारबन्धनेन सह सम्बद्धा दृश्यते। तस्य प्रकृतिविचारस्य वैशिष्ट्यं तत्त्वज्ञानस्य भगवद्भक्ति-शरणागत्यादिभिः सह समन्वये निहितं वर्तते। तुलनात्मकविश्लेषणात् ज्ञायते यदुभयोः दर्शनयोः पूर्णाभिन्नता नास्ति; तथापि जगतः परमाधारस्य स्वीकारे, प्रकृति-माययोः परमसत्तया सम्बन्धे तथा जीवस्य सांसारिकबन्धनातिक्रमणे महत्त्वपूर्णं दार्शनिकनिरवच्छिन्नत्वं दृश्यते। अध्ययनं मूलग्रन्थाधारित-पाठविश्लेषणात्मक-तुलनात्मकपद्धत्या कृतं वर्तते। निष्कर्षतः शङ्करदेवस्य प्रकृतिचिन्तनं प्राचीनोपनिषद्विचाराणां सरलपुनरुक्तिः न, अपि तु वैष्णवभक्तिपरम्परायां प्रकृति-माया-जीव-परमेश्वरसम्बन्धस्य विशिष्टं पुनर्विन्यासरूपमिति प्रतिपाद्यते।

**कूटशब्दाः**- प्रकृतिः, प्रमुखोपनिषदः, श्रीमन्तशङ्करदेवः, माया, ब्रह्म, जीवः, सृष्टितत्त्वम्, वैष्णवदर्शनम्।

# योगायुर्वेदयोः स्वास्थ्यतत्त्वमीमांसा- देहमनःसमन्वयस्य चिकित्साशास्त्रीयाध्ययनम्

**डॉ. ए. रामकृष्णः**

सहायाचार्यः, संस्कृतविभागः, सर्. सी. आर्. रेड्डी कळाशाला, एलूरु

आन्ध्रप्रदेशः

सारांशः-

भारतीयज्ञानपरम्परायां योगः आयुर्वेदश्च मानवजीवनस्य समग्रस्वरूपं विवेचयन्तौ परस्परपूरकौ शास्त्रसमुदायौ स्तः। आयुर्वेदस्य प्रमुखं प्रयोजनं स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणं, आतुरस्य विकारप्रशमनं च; योगशास्त्रस्य मुख्योऽभिप्रायः चित्तवृत्तिनिरोधेन आत्मस्वरूपावस्थानस्य साधनम्। तथापि एतयोः लक्ष्यभेदेऽपि शरीरस्य, मनसः, इन्द्रियाणां, आहारस्य, आचारस्य, निद्रायाः, प्राणस्य च परस्परसम्बन्धविषये महत्त्वपूर्णा समानदृष्टिः दृश्यते। प्रस्तुतस्य शोधलेखस्य मुख्योद्देश्यं योगायुवेदयोः स्वास्थ्यसम्बद्धानां तत्त्वानां तुलनात्मकं विश्लेषणं कृत्वा तयोः समन्वयस्य शास्त्रीयं स्वरूपं निरूपयितुम् अस्ति। अस्मिन् शोधे चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता, अष्टाङ्गहृदयम्, पातञ्जलयोगदर्शनम्, भगवद्गीता इत्यादीनां प्राथमिकग्रन्थानां पाठविश्लेषणं कृतम्। ऐतिहासिकपद्धत्या तयोः विकासक्रमः, तुलनात्मकपद्धत्या तात्त्विकसाम्यवैषम्ये, वर्णनात्मकपद्धत्या स्वास्थ्यसम्बद्धाः अवधारणाः, स्रोतसमीक्षया प्रमाणग्रन्थानां विश्वसनीयता च परीक्षिताः। आधुनिकशोधपरम्परायां योगस्य मानसिकस्वास्थ्ये, शारीरिकस्वास्थ्ये, जीवनशैलीजन्यव्याधिषु च सम्भावितप्रभावाः चर्चिताः सन्ति; आयुर्वेदस्य निवारणात्मकजीवनपद्धतिः अपि पुनः अनुसन्धानविषयतां प्राप्तवती। तथापि योगायुवेदयोः अन्तर्निहितं दार्शनिकं, व्यवहारिकं, चिकित्साशास्त्रीयं च सम्बन्धसूत्रं समग्रतया विवेचयन्तः अध्ययनाः अपेक्षया न्यूनाः सन्ति। प्रस्तुतलेखः तस्मिन् शोधान्तरस्थाने प्रवेशं कुर्वन्

योगायुवेदयोः सम्बन्धं केवलं आधुनिकचिकित्सायाः पूरकरूपेण न पश्यति, अपि तु भारतीयस्वास्थ्यदर्शनस्य द्विधाराभूतयोः शास्त्रयोः समन्विततत्त्वमीमांसां प्रतिपादयति। निष्कर्षतः शरीरसमत्वं, मानसिकप्रसादः, इन्द्रियनिग्रहः, युक्ताहारः, नियमिताचारः, प्राणसंयमः तथा आत्मानुशासनम् इत्येतानि समग्रस्वास्थ्यस्य परस्परसम्बद्धानि अङ्गानि इति प्रतिपाद्यते।

**बीजशब्दाः-** योगः, आयुर्वेदः, स्वास्थ्यं, चित्तम्, दोषाः, प्राणः, आहारः, दिनचर्या, मनः, समत्वम्।

## द्राह्यायण श्रौतसूत्र का संरचनात्मक अध्ययन

**अमितांशु**

दिल्ली विश्वविद्यालय

**शोध-सार:-**

द्राह्यायण श्रौतसूत्र सामवेदीय श्रौतसूत्र-परम्परा का एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसमें वैदिक यज्ञों, उनके अनुष्ठानिक विधान, ऋत्विजों के कर्तव्यों तथा सामगान से सम्बद्ध विविध विषयों का विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। प्रस्तुत शोध में द्राह्यायण श्रौतसूत्र की विषय-वस्तु का क्रमबद्ध एवं समग्र अध्ययन किया गया है। यह ग्रन्थ कुल इकतीस पटल में विभक्त है और प्रत्येक पटल में यज्ञीय कर्मकाण्ड के विभिन्न पक्षों का निरूपण किया गया है।

प्रारम्भिक पटलों में ज्योतिष्टोम, अग्निष्टोम, अग्निहोत्र तथा सोमयाग से सम्बद्ध विधियों, ऋत्विजों के कार्यों और सामगान की प्रक्रिया का वर्णन मिलता है। आगे के पटलों में षोडशी साम, गवामयन, महाव्रत, ब्रह्मत्व, प्रायश्चित्त तथा हविर्यज्ञ और चातुर्मास्य आदि विषयों का विवेचन किया गया है। मध्यवर्ती पटलों में सोमयाग के विविध अंगों, स्तोम-विन्यास, छन्द, देवता और साम के पारस्परिक सम्बन्ध तथा प्रतिहार, स्तोभ, उषस् और निधन आदि सामगान-संबन्धी विषयों का विशद निरूपण है।

इसके पश्चात् एकाह, अहीन, राजसूय, अश्वमेध, वाजपेय आदि विशिष्ट यज्ञों तथा सत्रयागों का विधान प्रस्तुत किया गया है। अन्तिम पटलों में गवामयन, अयन-सम्बन्धी

अनुष्ठानों तथा आदित्य, कौण्डपायी, तपश्चित्, सारस्वत और तुरायण आदि यागों का विवेचन मिलता है। इस प्रकार द्राह्यायण श्रौतसूत्र केवल यज्ञ-विधि का ग्रन्थ न होकर सामवेदीय श्रौतपरम्परा, सामगान-विधान तथा वैदिक कर्मकाण्ड की व्यापक संरचना को समझने का महत्त्वपूर्ण स्रोत है। प्रस्तुत अध्ययन से इसकी विषय-वस्तु की व्यापकता, क्रमबद्धता और वैदिक यज्ञीय परम्परा में इसके महत्त्व का स्पष्ट परिचय प्राप्त होता है।

**बीज-शब्द:-** द्राह्यायण श्रौतसूत्र, सामवेद, श्रौतसूत्र, यज्ञ, सोमयाग, सामगान, ऋत्विज्, गवामयन।

## भारतीय ज्ञान परम्परा और कौटिल्य का अर्थशास्त्र

डॉ. राजेश कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, पीजीडीएवी कॉलेज,

दिल्ली विश्वविद्यालय

**शोधसार:-**

अर्थशास्त्र भारतीय ज्ञान परम्परा का एक कालजयी ग्रन्थ है। इसके रचयिता को कौटिल्य, चाणक्य और विष्णुगुप्त के नाम से जाना जाता है। प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन का भी यह अत्यंत महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसमें राज्य, शासन तथा प्रशासन के विविध आयामों का वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक विवेचन प्राप्त होता है। कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित राज्य की अवधारणा, सप्तांग सिद्धांत (स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश, दण्ड, और मित्र) का वर्णन सर्वकालिक है. प्रशासनिक व्यवस्था का भी विशद विश्लेषण अर्थशास्त्र में किया गया है। षड्विध कूटनीति (सन्धि, विग्रह, आसन, यान, संश्रय और द्वैधीभाव), चतुर्विध उपाय (साम, दाम दण्ड और भेद) त्रिविध शक्तियां (प्रभुशक्ति, मंत्रशक्ति, उत्साह शक्ति) की महत्ता और प्रासंगिकता सैकड़ों वर्षों के बाद भी दुनिया महसूस कर रही है।

विकसित भारत बनाने के संकल्प के इस युग में जहाँ सुशासन, पारदर्शिता, आर्थिक नियंत्रण एवं प्रशासनिक दक्षता और राजनीतिक कौशल की आवश्यकता निरंतर बढ़ रही है,

कौटिल्य के सिद्धांत अत्यन्त प्रासंगिक और बढ़ गई है।

कौटिल्य के अनुसार राज्य एक जीवंत संस्था है, जिसका उद्देश्य प्रजा के योगक्षेम की रक्षा करना है। वे स्पष्ट करते हैं-

"प्रजासुखे सुखं राज्ञः, प्रजानां च हिते हितम्।"[2]

यह कथन राज्य और प्रजा के परस्पर संबंध को स्पष्ट करता है।

कौटिल्य ने राज्य को सात अंगों का समुच्चय माना है— स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश, दण्ड और मित्र।

इन सभी अंगों का समन्वय राज्य की स्थिरता एवं शक्ति का आधार है। इन सात अंगों में 'स्वामी' (राजा) को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है, किन्तु अन्य अंगों की उपेक्षा करने पर राज्य कमजोर हो सकता है। 'अमात्य' प्रशासनिक कार्यों के संचालन में सहायक होते हैं, जबकि 'जनपद' राज्य की आर्थिक एवं सामाजिक आधारशिला होता है। 'दुर्ग' सुरक्षा का प्रतीक है, 'कोष' आर्थिक शक्ति को दर्शाता है, 'दण्ड' कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने का साधन है, तथा 'मित्र' विदेश नीति में संतुलन स्थापित करने में सहायक होता है। इस प्रकार सप्तांग सिद्धांत राज्य को एक संगठित एवं सुदृढ़ इकाई के रूप में प्रस्तुत करता है।

प्रांतीय प्रशासन:-

मौर्यकालीन राज्य विस्तृत था, अतः प्रशासन को प्रभावी बनाने हेतु प्रांतीय व्यवस्था विकसित की गई। प्रांतों में नियुक्त अधिकारी केंद्रीय शासन के निर्देशों का पालन सुनिश्चित करते थे।

**स्थानीय प्रशासन:-**

ग्राम एवं नगर प्रशासन राज्य की आधारशिला थे। ग्रामिक एवं नगराध्यक्ष जैसे अधिकारी स्थानीय स्तर पर शासन का संचालन करते थे, जिससे प्रशासन में दक्षता एवं नियंत्रण बना रहता था।

**आर्थिक प्रशासन:-**

कौटिल्य ने आर्थिक व्यवस्था को राज्य की शक्ति का मूल माना है-

**"कोष मूलो दण्डः।"[4]**

राज्य की आय के प्रमुख स्रोत थे-

- भूमि कर
- व्यापार कर
- खनिज एवं वन संसाधन

आर्थिक पारदर्शिता हेतु लेखा-परीक्षा एवं गुप्तचर व्यवस्था का उपयोग किया जाता था। कौटिल्य ने प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति में योग्यता एवं ईमानदारी को विशेष महत्व दिया। उन्होंने अधिकारियों के कार्यों की निगरानी हेतु गुप्तचर प्रणाली का भी उपयोग करने की बात कही, जिससे भ्रष्टाचार पर नियंत्रण रखा जा सके।

इससे स्पष्ट होता है कि कौटिल्य प्रशासन में उत्तरदायित्व एवं पारदर्शिता को अत्यंत आवश्यक मानते थे।

उनकी नीतियाँ आधुनिक 'गुड गवर्नेंस' की अवधारणा के साथ सामंजस्य स्थापित करती हैं।[5] इसके अतिरिक्त, कौटिल्य की नीतियाँ आज के प्रशासनिक सुधारों, ई-गवर्नेंस तथा भ्रष्टाचार-नियंत्रण के प्रयासों में भी उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत यह दर्शाते हैं कि एक सुदृढ़ राज्य वही है, जो अपनी नीतियों में संतुलन, पारदर्शिता एवं जनकल्याण को प्राथमिकता देता है।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र केवल एक प्राचीन ग्रंथ नहीं, बल्कि एक वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक प्रशासनिक मार्गदर्शिका है। उनका राज्यदर्शन लोककल्याण, आर्थिक सुदृढ़ता तथा न्यायपूर्ण शासन पर आधारित है। सप्तांग सिद्धांत राज्य की संरचना को स्पष्ट करता है, जबकि प्रशासनिक व्यवस्था उसके क्रियात्मक स्वरूप को दर्शाती है। अतः कौटिल्य का अर्थशास्त्र न केवल ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह आधुनिक प्रशासनिक एवं राजनीतिक अध्ययन के लिए भी एक मार्गदर्शक ग्रंथ के रूप में स्थापित होता है।

# भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयाम

**Kiran Bala**
Visiting Faculty of Sanskrit, Bhagat Phool Singh Mahila Vishwavidyalaya, Khanpur Kalan, Sonipat

**सारांश:-**

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्ध ज्ञान-परंपराओं में से एक है। इसकी विशेषता केवल इसकी प्राचीनता में नहीं, बल्कि इसकी व्यापकता, समन्वयशीलता, वैज्ञानिक दृष्टि, आध्यात्मिक चेतना तथा लोककल्याणकारी भावना में निहित है। भारतीय चिंतन में ज्ञान को केवल जीविका प्राप्त करने का साधन न मानकर जीवन को सार्थक, संतुलित एवं कल्याणमय बनाने का माध्यम माना गया है। वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, भगवद्गीता, पुराण, दर्शनशास्त्र, आयुर्वेद, योग, व्याकरण, गणित, ज्योतिष, वास्तुशास्त्र, नाट्यशास्त्र, संगीतशास्त्र तथा विभिन्न कलाओं में भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयाम अभिव्यक्त होते हैं। इस परंपरा में मनुष्य, प्रकृति और समस्त जीव-जगत् के बीच पारस्परिक संबंध को विशेष महत्त्व दिया गया है। प्रस्तुत आलेख में भारतीय ज्ञान परंपरा के दार्शनिक, आध्यात्मिक, वैज्ञानिक, चिकित्सकीय, भाषिक, कलात्मक, पर्यावरणीय, सामाजिक एवं नैतिक आयामों का विवेचन करते हुए समकालीन जीवन में इसकी प्रासंगिकता को रेखांकित किया गया है।

**प्रमुख शब्द:-** भारतीय ज्ञान परंपरा, वेद, उपनिषद्, योग, आयुर्वेद, दर्शन, संस्कृति, विज्ञान, पर्यावरण, लोककल्याण।

# स्वामी दयानन्द के अनुसार पारम्परिक पद्धति

दीपक सरकार

संस्कृत विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय

सारांश:-

वेदों के भाष्यकारों में जिनका प्रमुख नाम है, वे हैं ऋषि दयानन्द। ऋषि दयानन्द का जन्म टंकारा नामक गाँव में 1881 विक्रम संवत में हुआ था। इनका बाल्यकाल का नाम मूलशंकर था। बचपन में ही शिवरात्रि के पर्व पर व्रत धारण किये हुए इस बालक ने शिवमूर्ति पर चूहे को चढ़ा देखकर सच्चे शिव के खोज में घर त्याग दिया। युवावस्था में इन्होंने मथुरा में ऋषि विरजानन्द से वेदों की शिक्षा प्राप्त की और वेद मन्त्र के वास्तविक अर्थ को समझा। गुरुदक्षिणा के रुप में इन्होंने वैदिक धर्म के प्रचार का व्रत लिया।

ऋषि दयानन्द ने वेदों की व्याख्या में प्रचीन काल से चली आती हुई परिपाटी को नहीं माना और अनेक युक्तियों से अपने पक्ष को प्रमाणित किया। वेद मन्त्रों के अर्थों एवं वेद वर्णित विषयों का परिचय देने के लिए पहले आपने 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' नामक पुस्तक लिखी और इसमें बताया कि वेदों में क्या है तथा वेद मन्त्रों की व्याख्या किस आधार पर करनी चाहिए। 1933 विक्रम संवत में अपने ऋग्वेद पर भाष्य लिखना प्रारंभ किया, जो 7वें मण्डल के दूसरे सूक्त के दूसरे मन्त्र तक लिखा जा सका था। नियति के कठोर हाथों ने उनके इस कार्य को पुरा नहीं होने दिया। ऋग्वेद के अतिरिक्त ऋषि दयानन्द ने कृष्ण यजुर्वेद की माध्यन्दिन शाखा पर भी भाष्य लिखा था।

# भारतीय ज्ञान परम्परा अवधारणा एवं वैशिष्टय:
## (उपनिषद् साहित्य के सन्दर्भ में)

**डॉ. उमेश चन्द्र जोशी**

सहा. प्राध्यापक संस्कृत विभाग, महाराणा प्रताप राजकीय महाविद्यालय, नानकमत्ता, ऊधम सिंह नगर उत्तराखण्ड

**शोध सार:-**

भारतीय चिन्तन प्रणाली में ज्ञान केवल सूचनाओं का संग्रह मात्र नहीं अपितु आत्मबोध अथवा सत्य को समझना है। संस्कृत वाङ्मय में वेद,वेदाङ्ग, दर्शन, स्मृतियाँ. पुराण आदि चतुर्दश विद्यास्थान इस परम्परा के प्रतिष्ठापक शास्त्र हैं। इसके अतिरिक्त भारत में उपजी भक्ति परम्पाराएं तथा लोककल्याणोपयोगी आचार विचार, भारतीय ज्ञानाधारित लोक चिन्तन भी इस परम्परा को पल्लिवत और पुष्पित करते हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा सृष्टि के आरम्भ से सतत गंगा प्रवाहवत् अपनी मूल प्रकृति का त्याग न करती हुई भी अपना निरन्तर संवर्धन कर रही है। भारतीय परम्परा में वेदान्तिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से उपनिषद् साहित्य को अत्यन्त गौरव प्राप्त है।

उपनिषदों में प्रतिपादित जीवन मूल्यों का महत्त्व, प्रकृति एवं पर्यावरण के प्रति सम्मान, आत्मज्ञान का महत्त्व, विश्व कल्याण अथवा लोकमंगल की भावना, आध्यात्मिक एवं यथार्थ ज्ञान का महत्त्व इत्यादि विषय भारतीय ज्ञान परम्परा की प्रमुख विशेषताओं के रूप में परिलक्षित होते हैं।

# भारतीय ज्ञान परम्परा में गुरु-शिष्य सम्बन्ध: नैतिकता एवं उत्तरदायित्व का समकालीन पुनर्पाठ

**मानवी**

शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

**सारांश:-**

भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा को मानव जीवन का प्रकाश पुंज कहा गया है। शिक्षा केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं बल्कि व्यक्तित्व निर्माण, चरित्र गठन, तथा जीवन मूल्यों में संवर्धन का साधन मानी गयी है। भारतीय विद्या के मूल स्रोत वेदों एवं उपनिषदों में ज्ञान को मुक्ति का साधन बताया गया है। ज्ञान के इस प्रकाश को प्रदान करने वाला गुरु तथा उसे ग्रहण करने वाला शिष्य भारतीय शिक्षा व्यवस्था के दो प्रमुख आधार स्तम्भ रहे हैं। भारत की प्राचीन शिक्षा व्यवस्था में गुरु और शिष्य का सम्बन्ध केवल शैक्षिक सम्बन्ध तक ही सीमित नहीं था बल्कि वह आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, नैतिक और सामाजिक विकास का माध्यम भी था। हमारे शास्त्रों में भी गुरु को ईश्वर तुल्य माना गया है–

**गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।**

**गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।**[1]

यह श्लोक गुरु की सर्वोच्च प्रतिष्ठा को व्यक्त करता है। वहीं शिष्य से भी यह अपेक्षा की गयी है कि वह विनम्रता, अनुशासन और सेवा भाव के साथ ज्ञान ग्रहण करे। वर्तमान समय में शिक्षा का स्वरूप परिवर्तित हो गया है। तकनीकी विकास, प्रतिस्पर्धा तथा वैश्वीकरण ने शिक्षा जगत को नयी दिशाएं प्रदान की हैं किन्तु इसके साथ-साथ नैतिक मूल्यों में क्षरण और उत्तर-दायित्व बोध में कमी की समस्याएं भी उत्पन्न हुई हैं। ऐसी स्थिति में भारतीय ज्ञान परम्परा में निहित गुरु-शिष्य सम्बन्ध का समकालीन पुनर्पाठ अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में गुरु-शिष्य की परम्परागत अवधारणा, उसके नैतिक आधार, दोनों पक्षों के उत्तरदायित्व तथा वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में उसकी प्रासंगिकता का विवेचन किया गया है।

**कूटशब्द:-** भारतीय ज्ञान परम्परा, गुरु-शिष्य सम्बन्ध, नैतिकता, उत्तरदायित्व, शिक्षा,

समकालीन परिप्रेक्ष्य।

# भारतीय ज्ञान-परम्परा और सतत् विकास : वैदिक चिन्तन की समकालीन प्रासंगिकता

**डॉ. अमित शर्मा**
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
डी.ए.वी. शताब्दी महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)

**शोधसार:-**

वर्तमान समय में मानव सभ्यता विज्ञान, प्रौद्योगिकी और औद्योगिक विकास की तीव्र गति के साथ आगे बढ़ रही है। इन उपलब्धियों ने जीवन को अनेक स्तरों पर सुविधासम्पन्न बनाया है, किन्तु विकास की अनियंत्रित प्रवृत्ति ने प्राकृतिक संसाधनों पर असाधारण दबाव भी उत्पन्न किया है। जलवायु परिवर्तन, जल-संकट, वायु एवं जल-प्रदूषण, वन-क्षरण, मृदा-अवनयन, जैव-विविधता का ह्रास और सामाजिक असमानता जैसी समस्याएँ यह संकेत करती हैं कि विकास के वर्तमान प्रतिमान में संतुलन का पुनर्स्थापन आवश्यक है। इसी पृष्ठभूमि में 'सतत् विकास' की अवधारणा वर्तमान और भावी पीढ़ियों के बीच उत्तरदायित्व का सेतु निर्मित करती है। भारतीय ज्ञान-परम्परा में मानव और प्रकृति के सम्बन्ध को केवल उपयोगिता के आधार पर नहीं, बल्कि परस्परावलम्बन, कर्तव्य और लोकमंगल की दृष्टि से देखा गया है। वैदिक साहित्य में पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, सूर्य तथा वनस्पतियों के प्रति सम्मानपूर्ण दृष्टि दिखाई देती है। उपनिषद् उपभोग में मर्यादा तथा सर्वभूतात्मक एकत्व का बोध कराते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता कर्म, समत्व और लोकसंग्रह के माध्यम से व्यक्ति के आचरण को व्यापक सामाजिक हित से सम्बद्ध करती है। आयुर्वेद स्वस्थ जीवन को संतुलित परिवेश से जोड़ता है और महोपनिषद् का 'वसुधैव कुटुम्बकम्' इस चेतना को वैश्विक स्तर प्रदान करता है।

प्रस्तुत शोधपत्र में भारतीय ज्ञान-परम्परा के इन विविध आयामों का आधुनिक सतत्

विकास के संदर्भ में विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का मूल प्रतिपाद्य यह है कि भारतीय परम्परा में पर्यावरणीय चेतना कोई पृथक् विषय नहीं, बल्कि जीवन के नैतिक, सामाजिक, आर्थिक और आध्यात्मिक अनुशासन का अभिन्न अंग है। अतः आधुनिक सतत् विकास को केवल तकनीकी और आर्थिक कार्यक्रम न मानकर उसके मूल्यपरक आधार पर भी विचार करना आवश्यक है। भारतीय ज्ञान-परम्परा आधुनिक विज्ञान का विकल्प प्रस्तुत नहीं करती, बल्कि विकास की दिशा को अधिक उत्तरदायी, संतुलित और लोककल्याणकारी बनाने के लिए एक महत्त्वपूर्ण नैतिक दृष्टि उपलब्ध कराती है।

कूट शब्दः- भारतीय ज्ञान-परम्परा, सतत् विकास, वैदिक चिन्तन, प्रकृति-दृष्टि, पर्यावरण चेतना, सहअस्तित्व, संयमित उपभोग, लोकमंगल।

# समग्र स्वास्थ्य एवं जीवन-गुणवत्ता के विकास में योग की भूमिका : आधुनिक संदर्भ में एक अध्ययन

**डॉ. सुनीता अटल**

सहायक आचार्य (संस्कृत) श्री वेंकटेश्वर महाविद्यालय,

दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

आज वैश्विक स्तर पर योग को शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक शान्ति का एक अचूक साधन माना जा रहा है, बल्कि इसका इतिहास अत्यंत प्राचीन है। योग के इस विशाल वृक्ष की जड़े हमारे सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेदों में गहराई से समायी हुई है। ऋग्वेद के एक मंत्र में कहा गया है युज्यते मन उत युज्यते धियो विप्र विप्रस्थ वृहतो विपश्रित, बुद्धिमान लोग परम ज्ञान की प्राप्ति के लिए अपने मन और अपनी बुद्धि को एकाग्र अर्थात् योगयुक्त करते हैं।

चित्त अथवा बुद्धि एवं मन से संयुक्त जीवात्मा के कर्म मलों की शुि‌द्ध हो जाने पर सम्पूर्ण तत्वों के यथार्थ स्वरूप के प्रत्यक्षीकरण पूर्वक परमात्मा स्वरूप के साक्षात्कार की

अवस्था ही योग का यथार्थ स्वरूप है। जब पाँचों ज्ञानेन्द्रियां अपने-अपने विषयों से उपरत होकर मन से निवश्त, हो जाती है उस स्थिति में परमगति कहते हैं। योग एक गूढ़ एवं जटिल शब्द है। किसी वस्तु से अपने को जोडना अथवा किसी कार्य में लगाना (1)

योग केवल शारीरिक व्यायाम नहीं है बल्कि यह शरीर मन और आत्मा को एक सूत्र में पिरोने का एक सम्पूर्ण उस स्थिर इन्द्रियों की धारणा को योग माना गया है। उस अवस्था में साधक प्रमादरहित हो जाता है क्योंकि योग ही शुभ संस्कारों का प्रवर्तक तथा अशुभ संस्कारों का निवर्तक होता है। (2) हठयोग तथा नाथयोग के अनुयायी शिव एवं प्रकृति के ऐक्य को योग कहते हैं। पतंजली योग में प्रकृति एवं पुरूष में भिन्नता बोध के परिणामस्वरूप होने वाले स्वरूपावस्थिति को योग कहा गया है।

# भास विरचित प्रतिमा नाटक में रामायणेतर निजी कवि कल्पनाएं

**डॉ. मनोहर लाल सुथार**

**शोधसार:-**

संस्कृत भाषा की विकास परंपरा में व्यास, वाल्मीकि आदि महान् कवियों के चित्र मानस पटल पर अवतरित होने के साथ साथ भास, शूद्रक, कालिदास, भवभूति, हर्ष, राजशेखर आदि नाटककारों की छवि भी नयन पटल के समक्ष उपस्थित हो जाती है। भास को प्रथम नाटककार के रूप में माना जाता हैं। यद्यपि भास से पूर्व भी नाटकों की रचना आवश्यक रूप से की जाती होगी तथापि इनसे पूर्व का कोई भी नाटक उपलब्ध नहीं है।

कालिदास जैसे महान् कवि ने भी अपने ग्रन्थों में भास का आदर के साथ उल्लेख किया है। संस्कृत नाटककारों में सबसे प्राचीन होते पर भी भास का महत्त्व नाटक-रचना की दृष्टि से किसी से कमतर नहीं है। भास के बिना संस्कृत नाटक साहित्य अधूरा और रिक्त है। भास कृत नाटक संघटन-सौष्ठव, भाषा, भाव, कला, रसनिष्पत्ति और अभिव्यञ्जनात्मक दृष्टि से तो श्रेष्ठ सिद्ध हैं ही अपितु नाटकीय संविधान और अभिनय की दृष्टि से भी उच्चतम श्रेणी

में रखे जा सकते हैं। इन नाटकों की यह महती विशेषता है कि इनका सरलतापूर्वक रङ्गमञ्च पर मंचन/अभिनय किया जा सकता है।

प्रतिमा नाटक की कथावस्तु का स्रोत और कवि की निजी कल्पनाएँ:-

'रामायण', 'महाभारत' और गुणाढ्य को 'बृहत्कथा' प्राचीन संस्कृत काव्य-कारों और नाट्यकारों की रचनाओं के कथानकों के मुख्य उपजीव्य रहे हैं। भास ने भी अपने नाटकों के कथानकों के लिए इन तीनों ही स्रोतों का उपयोग किया है। 'रामायण' के आधार पर उन्होंने 'प्रतिमानाटक' और अभिषेक नाटक' की रचना की थी। 'प्रतिमानाटक' के मूल कथानक का आधार महर्षि वाल्मीकि कृत 'रामायण' ही है, परन्तु कवि ने 'रामायण' के कथानक में काफी परिवर्तन कर उसमें स्वयं की अनेक कल्पनाओं का संयोजन करके नाटकीय औत्सुक्य तथा रस-भाव आदि के उत्कर्ष की वृद्धि की है। यह रसोत्कर्ष और भावोत्कर्ष अधोलिखित घटना क्रम से परिलक्षित होता है।

# अध्यात्म और संस्कृति के समन्वय से नागरिकता का विकास: भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन

**डॉ. रोहताश**

सहायक आचार्य, सत् जिंदा कल्याणा शिक्षण महाविद्यालय, कलानौर रोहतक

**डॉ. सुमन**

सहायक आचार्या, भगत फूल सिंह महिला विश्वविद्यालय खानपुर कलां सोनीपत

सारांश:-

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में नागरिकता की अवधारणा केवल संवैधानिक अधिकारों एवं राजनीतिक सहभागिता तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि इसमें नैतिक उत्तरदायित्व, सामाजिक संवेदनशीलता, सांस्कृतिक चेतना, पर्यावरणीय जिम्मेदारी, मानवीय गरिमा, सह-

अस्तित्व तथा वैश्विक शांति जैसे आयाम भी सम्मिलित हो गए हैं। वैश्वीकरण, तकनीकी परिवर्तन, सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक असमानता, पर्यावरणीय संकट तथा डिजिटल संचार के तीव्र विस्तार ने नागरिकता की पारंपरिक अवधारणा को नए संदर्भ प्रदान किए हैं। ऐसी स्थिति में नागरिकों में केवल अधिकारों की जानकारी विकसित करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उनमें कर्तव्य-बोध, आत्मानुशासन, सहानुभूति, सामाजिक उत्तरदायित्व और व्यापक मानवतावादी दृष्टिकोण का विकास आवश्यक है।

भारतीय ज्ञान परंपरा नागरिकता के विकास को व्यक्ति के बाह्य आचरण के साथ-साथ उसके आंतरिक विकास से जोड़ती है। भारतीय चिंतन में अध्यात्म का अर्थ केवल धार्मिक आस्था नहीं, बल्कि आत्मबोध, आत्मसंयम, सत्य, अहिंसा, करुणा, सेवा, सहिष्णुता, समत्व तथा समस्त जीवों के प्रति सम्मान की चेतना से है। इसी प्रकार संस्कृति केवल परंपराओं और अनुष्ठानों का समूह नहीं, बल्कि जीवन को संचालित करने वाले मूल्य, व्यवहार, ज्ञान, कला, सामाजिक संबंध और सामुदायिक उत्तरदायित्व की व्यापक व्यवस्था है। इस दृष्टि से अध्यात्म और संस्कृति का समन्वय व्यक्ति को अधिकार-सचेत नागरिक से आगे बढ़ाकर उत्तरदायी, नैतिक, संवेदनशील और सहभागी नागरिक के रूप में विकसित कर सकता है।

**मुख्य शब्द:-** अध्यात्म, संस्कृति, नागरिकता शिक्षा, भारतीय ज्ञान परंपरा, मूल्य शिक्षा, नैतिक विकास, वैश्विक नागरिकता

# भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयाम और जन-माध्यम के रूप में हिन्दी: संरक्षण, संवर्धन और वैश्विक भूमिका

**डॉ. यल. कोमुरा रेड्डी**

असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (हिन्दी)

एस.आर.आर.शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय (स्वायत्त),

करीम नगर, तेलंगाना

**शोध-सारांश:-**

भारतीय ज्ञान परंपरा भारत की दीर्घकालीन बौद्धिक, सांस्कृतिक और सामाजिक यात्रा की महत्वपूर्ण धरोहर है। इसमें दर्शन, ज्ञानमीमांसा, गणित, खगोलशास्त्र, आयुर्वेद, योग, कृषि, पर्यावरण, वास्तुकला, धातु-विज्ञान, राज्यशास्त्र, साहित्य, कला और जीवन-मूल्यों से संबंधित विविध ज्ञान शामिल है। यह परंपरा केवल धार्मिक या आध्यात्मिक विचारों तक सीमित नहीं है,बल्कि अनुभव, निरीक्षण, तर्क, प्रयोग और जीवन के व्यावहारिक अनुभवों से विकसित हुई ज्ञान-धारा है। औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था के प्रभाव से भारतीय ज्ञान के अनेक पक्ष आधुनिक शिक्षा और वैज्ञानिक विमर्श से लंबे समय तक दूर रहे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भारतीय ज्ञान परंपरा को शिक्षा, अनुसंधान और कौशल-विकास से जोड़ने की दिशा में महत्वपूर्ण अवसर प्रदान किया है।

इस संदर्भ में हिन्दी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। हिन्दी भारतीय ज्ञान को सामान्य विद्यार्थियों, शिक्षकों और समाज के व्यापक वर्ग तक पहुँचाने का प्रभावी जन-माध्यम बन सकती है। इतिहास में लोकभाषाओं और हिन्दी ने शास्त्रीय विचारों, सामाजिक सुधार और राष्ट्रीय चेतना को जनसामान्य तक पहुँचाया है। आज इंटरनेट, सोशल मीडिया, ई-पुस्तक, पॉडकास्ट, यूट्यूब और ऑनलाइन पाठ्यक्रम हिन्दी को भारतीय ज्ञान के डिजिटल लोकव्यापीकरण का व्यापक मंच प्रदान कर रहे हैं।

यह शोधालेख भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयामों और हिन्दी की जन-माध्यमीय भूमिका का विश्लेषण करता है। इसमें सरल और प्रमाणिक पारिभाषिक शब्दावली, वैज्ञानिक दृष्टि, आधुनिक शोध, डिजिटल संसाधन, बहुभाषी अनुवाद और वैश्विक प्रसार की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

**निष्कर्षतः-**

हिन्दी परंपरा और आधुनिकता, ज्ञान और समाज तथा भारत और विश्व के बीच एक प्रभावी सेतु बन सकती है।

# जगदीश चन्द्र बोस और भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा

**Dr. Arvind Kumar**
Meerut College

**सारांश:-**

आचार्य जगदीश चन्द्र बोस (30 नवम्बर 1858–23 नवम्बर 1937) आधुनिक भारत के उन महान वैज्ञानिकों में अग्रणी हैं जिन्होंने भौतिकी, पादप-शरीरविज्ञान तथा जैवभौतिकी के क्षेत्र में मौलिक अनुसंधान किया। उनका वैज्ञानिक जीवन केवल प्रयोगशाला-आधारित उपलब्धियों तक सीमित नहीं था, बल्कि उसमें प्रकृति की एकात्मकता, ज्ञान की अन्तर्विषयकता, स्वदेशी वैज्ञानिक उपकरणों के निर्माण तथा विज्ञान को समाज और राष्ट्र की सेवा में समर्पित करने की भावना भी दिखाई देती है। बोस ने विद्युतचुम्बकीय तरंगों पर अग्रणी प्रयोग किए और 1895 में कलकत्ता में मिलीमीटर तरंगों के वायरलेस संचरण का प्रदर्शन किया। बाद में उन्होंने पौधों की बाह्य उद्दीपनों के प्रति विद्युत एवं यांत्रिक प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया तथा "क्रेस्कोग्राफ" (Crescograph) जैसे अत्यन्त संवेदनशील उपकरणों का निर्माण किया।

भारतीय ज्ञान परम्परा के संदर्भ में बोस का अध्ययन विशेष महत्त्व रखता है। भारतीय दार्शनिक एवं वैज्ञानिक परम्पराओं में प्रकृति को परस्पर सम्बद्ध तत्त्वों की समग्र व्यवस्था के रूप में देखने की प्रवृत्ति मिलती है। बोस का वैज्ञानिक अनुसन्धान भी जीवन और जड़ पदार्थ के बीच प्रतिक्रियात्मक निरन्तरता तथा वनस्पति-जगत की सक्रियता की ओर संकेत करता है। तथापि, इस शोध-पत्र का उद्देश्य बोस के प्रयोगों को प्राचीन भारतीय सिद्धान्तों का प्रत्यक्ष वैज्ञानिक प्रमाण सिद्ध करना नहीं, बल्कि यह विवेचना करना है कि उनकी वैज्ञानिक दृष्टि और भारतीय ज्ञान परम्परा में निहित समग्रता, प्रकृति-सम्मान, अनुभवजन्य ज्ञान और अन्तर्विषयकता के बीच किस प्रकार वैचारिक साम्य दिखाई देता है।

मुख्य शब्द:- जगदीश चन्द्र बोस, भारतीय ज्ञान प्रणाली, भारतीय ज्ञान परम्परा, वनस्पति विज्ञान, जैवभौतिकी, क्रेस्कोग्राफ, प्रकृति-दृष्टि, अन्तर्विषयकता, स्वदेशी विज्ञान।

# भारतीय ज्ञान परंपरा में अर्थ-चिंतन : कौटिल्यीय 'वार्ता' और आधुनिक सतत विकास (SDGs)

**गायत्री जोशी**

व्याख्याता, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर

एवं शोधार्थी शिक्षा विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

**शोध-सार:-**

आधुनिक वैश्विक अर्थव्यवस्था गंभीर संकटों जैसे आय में असमानता, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन, जलवायु परिवर्तन और अनियंत्रित उपभोक्तावाद का सामना कर रही है। इन चुनौतियों के समाधान हेतु संयुक्त राष्ट्र (UN) ने २०१५ में 'सतत विकास लक्ष्य' (Sustainable Development Goals - SDGs) निर्धारित किए। परंतु, पाश्चात्य अर्थशास्त्र का मूल ढाँचा बहुधा 'उत्पादन और उपभोग की अनर्गल वृद्धि' पर टिका है, जो इस समस्या का स्थायी समाधान प्रस्तुत करने में असमर्थ सिद्ध हो रहा है। प्रस्तुत शोध-पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा (Indian Knowledge Systems - IKS) के अंतर्गत आचार्य कौटिल्य द्वारा 'अर्थशास्त्र' में प्रतिपादित 'वार्ता' (Varta) की संकल्पना का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह पत्र यह प्रतिपादित करता है कि कौटिल्यीय अर्थ-चिंतन में 'वार्ता' केवल धन-सृजन की विद्या नहीं है, बल्कि यह 'आन्वीक्षिकी' (तार्किक दर्शन) और 'धर्म' (नैतिक कर्तव्य) से अनुप्राणित एक संतुलित, नैतिक एवं पारिस्थितिक रूप से सतत आर्थिक ढाँचा है। शोध-पत्र में कौटिल्यीय 'वार्ता' का संयुक्त राष्ट्र के मुख्य सतत विकास लक्ष्यों (SDGs 1, 2, 8, 12, 13, 15, और 16) के साथ तुलनात्मक एवं संश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

**बीज शब्द:-** कौटिल्यीय अर्थशास्त्र, वार्ता, भारतीय ज्ञान परंपरा, सतत विकास लक्ष्य (SDGs), योगक्षेम, पारिस्थितिक अर्थशास्त्र, आन्वीक्षिकी।

# भारतीय ज्ञान परम्परा में अध्यात्म और नैतिक जीवन : आत्मबोध से लोकमंगल तक

**नरेन्द्र कुमार पितलियाँ**

शोधार्थी, राजकीय कला महाविद्यालय कोटा (राज.)

**शोध-सारांश:-**

भारतीय ज्ञान परम्परा का मूल स्वरूप मनुष्य के बहुआयामी विकास से सम्बद्ध है। इसमें ज्ञान को केवल बौद्धिक सूचना नहीं, बल्कि जीवन-दृष्टि, आत्मानुशासन, नैतिक आचरण और लोकहित से जोड़ा गया है। अध्यात्म इस परम्परा का ऐसा महत्त्वपूर्ण आयाम है जो मनुष्य को बाह्य उपलब्धियों से आगे ले जाकर अपने स्वरूप, कर्तव्य और व्यापक सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति जागरूक करता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य भारतीय ज्ञान परम्परा में अध्यात्म और नैतिक जीवन के अन्तःसम्बन्ध का विवेचन करते हुए यह प्रतिपादित करना है कि आत्मबोध भारतीय चिन्तन में केवल व्यक्तिगत मुक्ति का साधन नहीं, बल्कि नैतिक परिष्कार और लोकमंगल की प्रेरणा भी है। उपनिषदों में आत्मविद्या, कठोपनिषद् में इन्द्रिय-मन-बुद्धि का संयम, तैत्तिरीयोपनिषद् में सत्य और धर्म का आचरण तथा भगवद्गीता में निष्काम कर्म और लोकसंग्रह—इन सभी में अध्यात्म और नैतिकता का समन्वित स्वरूप दिखाई देता है। शोध में यह निष्कर्ष सामने आता है कि भारतीय अध्यात्म व्यक्ति को संसार से पलायन नहीं सिखाता, बल्कि आत्मसंयम, कर्तव्यनिष्ठा, करुणा, सत्य, सेवा और लोकहित की दिशा में सक्रिय करता है। समकालीन नैतिक संकट, उपभोक्तावाद, तनाव और सामाजिक विघटन के संदर्भ में यह दृष्टि विशेष रूप से प्रासंगिक है।

## प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति की प्रासङ्गिकता

**डॉ. हेम चन्द्र**
असससस्टेंन्ट्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
शहीद नंदन ससंह चम्याल राजकीय आदिश महातिद्यालय देधुरा (चम्पात),
उत्तराखण्ड

शोध-सार:-

भारतीय संस्कृत, सभ्यता तथा धर्म के मूल आधार स्तम्भ वेद है। भारतीय ज्ञान परम्परा और वेदों को तनत्य तथा अपौरुषेय स्वीकार ककया जाता है। श्रुतत परम्परा से प्राप्त यह वैकदक ज्ञानराति मुख्यरूप से चार भागों में तवभातजत है– संतहता, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपतनषद्। वेदों में तनतहत ज्ञानराति के सम्यक् अवधारण हेतु इन चारों तवभागों का अध्ययन आवश्यक है। वेद का अतततर् भाग होने के कारण उपतनषदों को वेदातत भी कहा जाता है। प्रस्थानत्रयी के अततगमत पररगतणत ये वेद प्रततपाकदत ज्ञान के साररूप होते हुए भी ज्ञान का भण्डार है। उपतनषद् से तात्पयम है ब्रह्मचारी का ज्ञानप्रातप्त हेतु गुरु के पास जाना। उपतनषदों में प्रततपाकदत तत्त्वों का अवलोकन करने पर हमें आध्यातत्र्क तत्त्वों के साथ–साथ तत्कालीन सर्ाज की तवतभन्न व्यवस्थाओं का ज्ञान होता है जो कक वतमर्ान सार्ातजक व्यवस्थाओं के तलए एक आदिम रूप प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत िोध–पत्र र्ें प्राचीन भारतीय तिक्षा पद्धतत का तववेचन कर उनकी प्रासतगगकता को तसद्ध करने का प्रयत्न ककया जाएगा।

## भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में आरोग्य-विचार

**डॉ. समय सिंह मीणा एवं डॉ. गोपाल लाल सालवी**
सह-आचार्य संस्कृत, सहायक आचार्य समाजशास्त्र राजकीय स्ना. महाविद्यालय, प्रतापगढ़ (राज.)

**शोध-सार:-**

भारतीय सनातन ज्ञान परंपरा मूलतः आध्यात्मिक रही है किंतु वह अपनी अखंड तथा परमपूत साधना के द्वारा साध्यभूत मोक्षमूलक परमार्थिक सत्यता का सतत अनुसंधान करती रही है। यहां आदिकाल से ही साध्य एवं साधन दोनों में पूर्ण संतुलन बना रहा है। समस्त ऐहिक और पारलौकिक फलों के प्राप्त्यर्थ (पुरुषार्थचतुष्टय की सिद्धि) करणीय प्रयत्नों का एकमात्र साधनभूत मानव-शरीर है। अतः एव महाकवि कालिदास लिखते हैं- 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।' अतः साधनभूत शरीर को स्वस्थ और पवित्र रखना हमारा प्रथम कर्तव्य हो जाता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए मानव शरीर की रक्षा हेतु हमारे मनीषियों ने अपने अतिसूक्ष्म चिंतन, मनन और प्रयोगात्मक अनुभव द्वारा लोककल्याणार्थ अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया है जिनमें आरोग्य प्राप्ति हेतु असंख्य उपाय बतलाए गए हैं। भारतीय चिकित्सा-शास्त्र-आयुर्वेद प्राचीन से प्राचीनतम है।

संकेताक्षरः- आरोग्य, आयुर्वेद, साधनभूत, नीरोग, अनामय, आयुर्वेद-वृहत्त्रयी, आहार-शुद्धि, उष:पान, कुपथ्यजन्य, प्रसन्नात्मा, स्वस्थ।

# अतिसारनिदान का सम्पादन, अनुवाद एवं समीक्षात्मक अध्ययन

**कमल रानी** — शोधच्छात्रा,

**डॉ. कृष्ण आर्य** — शोध निर्देशक

संस्कृत, पालि, एवं प्राकृत विभाग कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

**शोध-सारांश:-**

अतिसार आयुर्वेद में वर्णित एक महत्त्वपूर्ण जठरान्त्रीय विकार है, जिसका निदान एवं स्वरूप विभिन्न आयुर्वेदाचार्यों ने अपने-अपने ग्रन्थों में प्रतिपादित किया है। प्रस्तुत अध्ययन में आचार्य माधवकर एवं आचार्य त्रिमल्लभट्ट द्वारा वर्णित 'अतिसार-निदान' का तुलनात्मक अनुशीलन भी किया गया है। दोनों आचार्यों के वर्णनों में अतिसार के निदान, पूर्वरूप तथा विभिन्न भेदों के लक्षणों में पर्याप्त साम्य दृष्टिगोचर होता है। वातज, पित्तज, कफज,

त्रिदोषज, शोकज एवं आमज अतिसार के लक्षणों का विश्लेषण करने पर अनेक समानताओं के साथ कुछ विशिष्ट भिन्नताएँ भी प्राप्त होती हैं। माधवकर ने कुछ रोगभेदों में लक्षणों एवं रोगोत्पत्ति का अधिक क्रमबद्ध तथा विशिष्ट निरूपण किया है, जबकि त्रिमल्लभट्ट ने विशेषतः आमज अतिसार के लक्षण एवं उपद्रवों का अपेक्षाकृत विस्तृत विवेचन किया है। इस प्रकार, 'वृत्तमाणिक्यमाला' में अतिसार-निदान का प्रतिपादन आयुर्वेद की निदानपरक परम्परा को समृद्ध करने वाला तथा चिकित्सकीय दृष्टि से महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है।

मुख्य शब्दः- अतिसार, अतिसार-निदान, निदान, वातज अतिसार, पित्तज अतिसार, कफज अतिसार, आमज अतिसार, लक्षण, विश्लेषणात्मक, आदि।

# गीता एवं आयुर्वेद - एक भावार्थ - मिलन - समग्र स्वास्थ्य

**ओम प्रकाश अवस्थी** MABGS

(परास्नातक श्रीमद्भवद्गीता)

**सारांशः-**

यह शोधपत्र श्रीमद् भगवद्गीता और आयुर्वेद के मूल भावार्थ में विद्यमान एक ही समग्र जीवन-दृष्टि का अन्वेषण करता है। भगवद्गीता जहाँ आत्मा, धर्म, कर्म, ज्ञान, भक्ति एवं समत्व योग के माध्यम से मानव को आंतरिक संतुलन, कर्तव्यनिष्ठा और मोक्ष की ओर उन्मुख करती है, वहीं आयुर्वेद शरीर, मन और आत्मा के त्रिसूत्री स्वास्थ्य-वात, पित्त, कफ के संतुलन, आहार, अचार, निद्रा तथा ब्रह्मचर्य के द्वारा स्वस्थ जीवन का मार्ग प्रशस्त करता है। गीता में वर्णित 'समत्वं योग उच्यते' का सिद्धान्त आयुर्वेद के 'स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्' के उद्देश्य से पूर्णतः मेल खाता है। हमारे यहाँ कहा गया है- सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। निरोग कैसे रहा जाए, इसका उत्तर हमारे ऋषियों ने हजारों साल पहले ही दे दिया था- भोजन को औषधि बना लो। आज जब पूरी दुनिया मिलेट्स और बैलेंस डाइट की बात कर रही है, तब श्रीमद्भगवद्गीता और आयुर्वेद का यह संयोग और भी प्रासंगिक हो जाता

है।गीता केवल धर्मग्रंथ नहीं, जीवन जीने की कला है, और आयुर्वेद केवल चिकित्सा नहीं, स्वस्थ रहने का दर्शन है। दोनों एक ही बात कहते हैं- अति सर्वत्र वर्जयेत्।

मुख्य शब्दः- गीता, आयुर्वेद, भावार्थ, समग्र स्वास्थ्य, समत्व योग, प्रकृति, कर्म एवं आचार।

# पुरुषोत्तम मास की उपयोगिता

**नितेश कुमार गुप्ता**

स्नातक संस्कृत प्रतिष्ठ एवं अनुसंधान पी. जी. डी. ए. वी. महाविद्यालय

**सारांशः-**

परुषोत्तम मास भारतीय चान्द्र-सौर कालगणना तथा धार्मिक परम्परा का एक विशिष्ट अंग है। भारतीय पंचांग में एक चान्द्र मास लगभग 29.5 दिन का होता है, जबकि एक सौर मास लगभग 30.4 दिन का होता है। इस प्रकार चन्द्र र्ष के बारह मास लगभग उ५4 दिन के होतेहैं, जबकि सौर वर्ष लगभग उ६५४4 दिन का होता है। दोनों के बीच प्रत्येक वर्ष लगभग 10 से 11 दिनों का अन्तर उत्पन्न होता रहता है। इस अन्तर को दूर कर चान्द्र-सौर पंचांग को ऋतु एवं सौर गति के साथ सामंजस्य में रखने के लिए लगभग उ2 माह १६ दिन के अन्तराल में एक अतिरिक्त चान्द्र मास का समावेश किया जाता है। यही अतिरिक्त मास अधिक मास कहलाता है। जब किसी चान्द्र मास की अवधिमें सर्य एक राशि सेदूसरी राशि में प्रवेश नहीं करता, अर्थात् उस मास में सूर्य-संक्रान्ति नहीं होती, तब उस मास को अधिक मास माना जाता है। यह सामान्यतः लगभग 29.5 दिनोंका ही होता है और प्र्येक लगभग 2 से 3 वर्षों में एक बार आता है। धार्मिक परम्परा में अधिक मास को प्रारम्भ में उपेक्षित माना गया, किन्तुभगवान विष्णु ने इसे स्वीकार कर अपना नाम 'पुरुषोत्तम मास प्रदान किया। इसी कारण वैष्णव परम्परा में यह मास अत्यन्त पवित्र और पुण्यदायक माना जाता है। पुराणों विशेषतः पद्मपुराण और स्कन्दपुराण की परम्परा में परुषोत्तम मास की महिमा का विस्तत निरूपण मिलता है इस अवधि में स्नान, दान, जप, तप, व्रत, विष्णु-पूजन,

भगवन्नाम-स्मरण, कथा-श्रवण तथा धार्मिक अनुष्ठानों को विशेष महत्त्व दिया गया है। इस प्रकार पुरुषोत्तम मास एक ओर भारतीय पंचांग की खगोलीय एवं कालगणनात्मक आवश्यकता को पूरा करता है, वहीं दूसरी ओर भारतीय धार्मिक संस्कृति में आत्मशुद्धि, संयम, दान, भक्ति और आध्यात्मिक साधना का विशेष अवसर प्रदान करता है अतः पुरुषोत्तम मास का अध्ययन केवल धार्मिक आस्था के दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि भारतीय कालगणना, सूर्य-चन्द्र की गति, ऋतु-सामंजस्य तथा पुराण-परम्परा के समांन्वेत अध्यन के रूप में भी महत्तवपूर्ण है।

# प्राचीन भारतीय विमानशास्त्र: उद्भव, तकनीकी संरचना एवं वैज्ञानिक दृष्टि

**अपराजिता अंशु एवं अमित मुरारि**

शोधच्छात्रा(ज्योतिष), शोधच्छात्र(व्याकरण)

केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

**शोध-सार:-**

प्रस्तुत शोध-आलेख प्राचीन भारतीय वाङ्मय में निहित विमानशास्त्र की तकनीकी संरचना, दार्शनिक पृष्ठभूमि एवं वैज्ञानिक उपादेयता का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारतीय ज्ञान-परंपरा में वैमानिकी केवल एक कल्पना न होकर भौतिक, रासायनिक, धातुकर्मीय एवं वायुगतिकीय (Aerodynamics) सिद्धांतों पर आधारित एक सुव्यवस्थित एवं बहु-विषयक तंत्र था। अध्ययन में वैदिक संहिताओं से प्राप्त स्वचालित, बहु-प्रणोदक और जल-नभगामी यानों के संदर्भों से लेकर महर्षि भारद्वाज-सम्मत 'यन्त्रसर्वस्व' तथा 'बृहद्विमानशास्त्र' का गंभीर अनुशीलन किया गया है।

इसके अंतर्गत विमान के इकत्तीस अनिवार्य अंगों, सौर-ऊर्जा अवशोषक ग्रिड (सूर्यस्य शक्त्याकर्षणपञ्जरम्), युगानुरूप वर्गीकरण (मान्त्रिक, तान्त्रिक एवं कृतक) तथा वैमानिक हेतु निर्धारित 32 रहस्यों (यथा छलावरण/स्टील्थ, स्तम्भन एवं संचार-प्रणाली) का विस्तृत

विवेचन समाहित है। साथ ही, वायुमंडलीय भंवरों (आवर्तों) पर आधारित पाँच आकाशीय पथों—रेखापथ, मण्डलपथ, कक्षापथ, शक्तिपथ एवं केन्द्रपथ—की वैज्ञानिक गतिकी स्पष्ट की गई है।

आलेख में ग्यारहवीं शताब्दी के महाराज भोज कृत 'समरांगणसूत्रधार' के आलोक में पारद-वाष्प प्रणोदन प्रणाली (Mercury-Vapor Propulsion) तथा विमान की छह बुनियादी दिशात्मक गतियों (6-DoF) की यांत्रिक कार्यप्रणाली को रेखांकित किया गया है। इसके अतिरिक्त विश्वकर्मा (स्थूल शिल्प), छायापुरुष (सूक्ष्म तरंग प्रौद्योगिकी) और मनु (सामाजिक नीतिशास्त्र) की त्रिस्तरीय ज्ञान-परंपरा के समन्वय द्वारा विज्ञान को लोककल्याण से जोड़ा गया है। यह अध्ययन सिद्ध करता है कि प्राचीन विमानशास्त्र में आधुनिक रडार-अवशोषक तकनीक, इलेक्ट्रॉनिक वारफेयर, कक्षीय यांत्रिकी और एयरोस्पेस एथिक्स के वैचारिक बीज निहित हैं। यह शोध संस्कृत वैज्ञानिक पाण्डुलिपियों के पाठालोचनात्मक संपादन और प्रयोगशाला-आधारित भौतिक अनुसंधान की अपरिहार्यता को रेखांकित करता है।

**प्रमुख शब्दः-** विमानशास्त्र, यन्त्रसर्वस्व, समरांगणसूत्रधार, पारद-वाष्प प्रणोदन, विमान-रहस्य, आकाशीय पथ, भारतीय ज्ञान-परंपरा।

# शिक्षा-वेदाङ्ग और वर्तमान शिक्षा-पद्धति का तुलनात्मक अध्ययन

**डॉ. प्रमा द्विवेदी**

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृतविभाग

जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज, प्रयागराज

**सारांशः-**

भारतीय ज्ञान-परम्परा में वेदों के संरक्षण, अध्ययन और शुद्ध परम्परा को बनाए रखने के लिए षड्वेदाङ्गों का विकास हुआ। इन छह वेदाङ्गों—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द

और ज्योतिष—में शिक्षा-वेदाङ्ग का प्रमुख सम्बन्ध ध्वनि, वर्ण, स्वर, मात्रा, उच्चारण, बल, साम्य तथा संतान अथवा ध्वनियों के निरन्तर प्रवाह से है। वैदिक वाङ्मय के मौखिक संरक्षण में इसकी भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है। तैत्तिरीयोपनिषद् की शिक्षा-वल्ली में शिक्षा के छह आधारभूत तत्त्वों को "वर्णः स्वरः मात्रा बलम् साम सन्तानः" के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

भारत सरकार के वैदिक हेरिटेज पोर्टल के अनुसार शिक्षा को वैदिक ध्वनिविज्ञान एवं उच्चारण से सम्बन्धित वेदाङ्ग माना गया है तथा इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रतिशाख्य और शिक्षा-ग्रन्थों की परम्परा विकसित हुई।

दूसरी ओर वर्तमान भारतीय शिक्षा-पद्धति आधुनिक विज्ञान, तकनीक, लोकतांत्रिक मूल्यों, समावेशिता, कौशल-विकास, रोजगार, अनुसंधान तथा बहुविषयक अध्ययन पर केन्द्रित है। विशेष रूप से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भारतीय शिक्षा को अधिक समग्र, बहुविषयक, अनुभवात्मक, विद्यार्थी-केंद्रित और कौशल-आधारित बनाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन प्रस्तावित किए हैं। नीति में कला, विज्ञान, व्यावसायिक शिक्षा तथा सह-पाठ्यचर्या के बीच कठोर विभाजन समाप्त करने, भारतीय भाषाओं को प्रोत्साहन देने और मूल्य-आधारित शिक्षा पर बल दिया गया है।

प्रस्तुत शोधपत्र में शिक्षा-वेदाङ्ग और वर्तमान शिक्षा-पद्धति का उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि, शिक्षक-विद्यार्थी सम्बन्ध, मूल्यांकन, भाषा, स्मृति, अनुशासन, व्यावहारिकता, तकनीकी उपयोग और मूल्य-शिक्षा आदि आधारों पर तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दोनों प्रणालियाँ अपने-अपने ऐतिहासिक संदर्भों में उपयोगी हैं। शिक्षा-वेदाङ्ग की ध्वनि-शुद्धि, एकाग्रता, श्रवण-अभ्यास, अनुशासन और गुरु-शिष्य संवाद की परम्परा आधुनिक शिक्षा को अधिक मानवीय और एकाग्र बनाने में उपयोगी हो सकती है, जबकि आधुनिक शिक्षा की वैज्ञानिक दृष्टि, सार्वभौमिक पहुँच, समावेशिता और तकनीकी संसाधन प्राचीन ज्ञान-परम्परा को व्यापक समाज तक पहुँचाने में सहायक हो सकते हैं।

# हिंदी साहित्य में भारतीय जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति : परम्परा से आधुनिकता तक

**डॉ. छाया**
सहायक प्राध्यापिका (हिंदी विभाग)
निरंकारी बाबा गुरबचन सिंह मेमोरियल महाविद्यालय, सोहना

**शोध-सार:-**

भारतीय संस्कृति की विशिष्ट पहचान उसकी समृद्ध जीवन-दृष्टि, मानवीय संवेदना और मूल्य-परंपरा में निहित है। भारतीय चिंतन परंपरा में मनुष्य के व्यक्तिगत विकास के साथ-साथ सामाजिक कल्याण, नैतिक आचरण, सह-अस्तित्व और लोकमंगल को विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है। सत्य, अहिंसा, करुणा, दया, त्याग, तप, परोपकार, सहिष्णुता, समन्वय, कर्तव्यबोध, न्याय, आत्मसंयम तथा प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता भारतीय जीवन-मूल्यों के प्रमुख आधार रहे हैं। ये मूल्य भारतीय समाज के धार्मिक, दार्शनिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक जीवन में विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होते रहे हैं। साहित्य ने इन जीवन-मूल्यों को सुरक्षित रखने, पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित करने तथा बदलते सामाजिक संदर्भों में उनका पुनर्मूल्यांकन करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

हिंदी साहित्य भारतीय जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम रहा है। हिंदी साहित्य के विभिन्न कालखंडों में तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों, सांस्कृतिक चेतना और मानवीय आकांक्षाओं के अनुरूप जीवन-मूल्यों के विविध रूप सामने आते हैं। आदिकालीन साहित्य में वीरता, स्वाभिमान, कर्तव्य एवं सामुदायिक चेतना के मूल्य दिखाई देते हैं। भक्तिकाल में इन मूल्यों का स्वरूप अधिक व्यापक और मानवीय हो जाता है। कबीर ने जाति-पाँति, धार्मिक आडंबर और सामाजिक भेदभाव का विरोध करते हुए मानव-समता तथा आत्मबोध को प्रतिष्ठित किया। तुलसीदास के साहित्य में मर्यादा, कर्तव्य, त्याग, आदर्श पारिवारिक संबंध, लोकमंगल और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना प्रमुखता से व्यक्त हुई है। सूरदास के काव्य में प्रेम, वात्सल्य और समर्पण की भावनाएँ तथा जायसी के

काव्य में प्रेम, समन्वय और आध्यात्मिक चेतना भारतीय जीवन-दृष्टि को नए आयाम प्रदान करती हैं।

आधुनिक हिंदी साहित्य में भारतीय जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना के साथ जुड़ती है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के साहित्य में राष्ट्रीय जागरण तथा सामाजिक सुधार की भावना दिखाई देती है। मैथिलीशरण गुप्त ने राष्ट्रप्रेम, त्याग, कर्तव्य और नारी-गरिमा को महत्त्व दिया। प्रेमचंद के कथा-साहित्य में किसान, श्रमिक, स्त्री और वंचित वर्गों के जीवन-संघर्ष के माध्यम से न्याय, समानता, करुणा, मानवीय गरिमा तथा सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे मूल्यों को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। महादेवी वर्मा के साहित्य में करुणा, संवेदना, नारी-चेतना तथा जीव-जगत के प्रति आत्मीयता दिखाई देती है, जबकि रामधारी सिंह 'दिनकर' के साहित्य में राष्ट्रीय स्वाभिमान, सामाजिक न्याय, संघर्ष और मानवीय गरिमा के मूल्य प्रमुख हैं।

समकालीन हिंदी साहित्य में भारतीय जीवन-मूल्यों के स्वरूप और उनकी व्याख्या में उल्लेखनीय परिवर्तन दिखाई देता है। वैश्वीकरण, नगरीकरण, उपभोक्तावाद, तकनीकी विकास, बदलते पारिवारिक संबंधों और तीव्र सामाजिक परिवर्तन ने पारंपरिक जीवन-मूल्यों के सामने नई चुनौतियाँ उत्पन्न की हैं। इसके बावजूद समकालीन साहित्य में मानवीय संवेदना, समानता, स्वतंत्रता, लोकतांत्रिक चेतना, स्त्री-अस्मिता, दलित चेतना, पर्यावरण-संरक्षण तथा सामाजिक न्याय जैसे मूल्य नए संदर्भों में निरंतर अभिव्यक्त हो रहे हैं। इस प्रकार आधुनिक साहित्य परंपरागत मूल्यों को ज्यों का त्यों स्वीकार करने के बजाय उनकी प्रासंगिकता, सीमाओं और परिवर्तनशीलता पर भी प्रश्न करता है।

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य हिंदी साहित्य की विभिन्न कालगत एवं वैचारिक प्रवृत्तियों के संदर्भ में भारतीय जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति का अध्ययन करना है। इसमें यह देखने का प्रयास किया गया है कि साहित्य में भारतीय जीवन-मूल्य किस प्रकार समय के साथ अपना स्वरूप बदलते हुए भी अपनी मूल मानवीय चेतना को बनाए रखते हैं। साथ ही, परंपरा और आधुनिकता के मध्य उत्पन्न तनाव, संवाद और समन्वय को भी रेखांकित किया गया है। अध्ययन का निष्कर्ष यह स्थापित करता है कि हिंदी साहित्य भारतीय जीवन-मूल्यों का केवल संरक्षक नहीं, बल्कि उनका आलोचक, पुनर्व्याख्याकार और समकालीन संदर्भों में

पुनर्सृजन करने वाला सशक्त माध्यम भी है। बदलते समय में भी मानवीय गरिमा, करुणा, सह-अस्तित्व, न्याय और लोकमंगल जैसे मूल्य साहित्य की प्रासंगिकता को बनाए रखते हैं और समाज को अधिक संवेदनशील एवं मानवीय बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

बीज शब्दः- भारतीय जीवन-मूल्य, हिंदी साहित्य, भारतीय संस्कृति, लोकमंगल, मानवीय संवेदना, सत्य, करुणा, समन्वय, सामाजिक न्याय, परंपरा, आधुनिकता, समकालीन साहित्य।

# स्वर्णिम भारत के नवनिर्माण में बौद्ध दर्शन के सिद्धांतों की भूमिका

**मोनिका एवं डॉ. सत्यानन्द**

## शोध-सारः-

स्वर्णिम भारत के नवनिर्माण का विचार आते ही, मन में विकसित भारत की छवि दृष्टिगोचर हो जाती है। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सभी देश प्रेमियों द्वारा जितने भी प्रयास किये जा रहे हैं, सराहनीय हैं। किसी भी देश के विकास का आधार उस देश के दर्शन की अवधारणायें तथा कोई न कोई विरासत या परम्परा होती है। सर्वविदित है, भारत विविधता में एकता रखने वाला देश है जिसका पोषण अनेक संस्कृति और ऋषि परम्पराओं से होता है। किसी भी राष्ट्र के विकास में उस राष्ट्र की समृद्ध संस्कृति और परम्परा अपना महत्वपूर्ण योगदान देती है। उन्हीं श्रृंखलाओं में से भारतीय दर्शन में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले बौद्ध दर्शन में वर्णित सिद्धांत देश की विकास यात्रा में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका रखते हैं। भगवान् बुद्ध के दार्शनिक और व्यावहारिक अनुभव से प्राप्त सिद्धांत- चार आर्य सत्य, अष्टांगिक मार्ग, अहिंसा, करुणा तथा मध्यम मार्ग, स्वर्णिम भारत के निर्माण में सहयोग दे रहे हैं और इसी क्रम में आगे भी अपना महत्वपूर्ण योगदान देने की सम्भावना रखते हैं। इसी परिकल्पना पर आधारित यह शोध पत्र इस बात की खोज करता है कि बौद्ध दर्शन के सिद्धांत विकसित भारत के रूप में आत्मनिर्भर, समावेशी और समृद्ध राष्ट्र की दृष्टि में कैसे

योगदान दे सकते हैं। बौद्ध दर्शन के सिद्धांतों को किस तरह से संस्कृति, शिक्षा और शासन व्यवस्था के साथ सम्मिलित किया जा सकता है जिससे की यह सिद्धांत सतत विकास (जो पर्यावरण और संसाधनों को बचाने में), सामाजिक समानता (सभी के लिए बराबरी) और वैश्विक सद्भाव (दुनिया में शांति और सहयोग) को बढ़ावा देने में अपना योगदान दे पाएं।

कूट शब्द:- स्वर्णिम भारत, बौद्ध दर्शन, सिद्धांत, चार आर्य सत्य, अष्टांगिक मार्ग, सतत विकास।

# ज्योतिषीय सिद्धांतो में यमल शिशु

**अंकित कुमार**

शोधच्छात्र, दिल्ली विश्वविद्यालय

**सारांश:-**

सफल दांपत्य जीवन के संबंध में जनसाधारण में यह अवधारणा है कि दांपत्य जीवन तब तक पूर्ण अर्थात् सफल नहीं होता है, जब तक उन्हें संतान सुख की प्राप्ति नहीं होती। शिशु का उसमें भी यमल होना जैसे सोने में सुहागा मिल गया। यमल शिशुओं का जन्मस्थान तथा जन्मतिथि आदि अनेक समानता के कारण जन्मकुंडली भी एक समान प्रतीत होती है, परंतु उनका जीवन तथा भविष्य पूरी तरह समान नहीं होता, फलादेश में अंतर का बीज ज्योतिषीय परंपरा में प्राप्त होता है। कुछ ज्योतिषीय ग्रंथो में गर्भ कुंडली को आधार रखके भी विश्लेषण की परंपरा है, यह माना जाता है कि गर्भाधान के अनुसार जुड़वा संतान की कुंडली बनाई जाए, तो ऐसे में फलादेश सरल तथा स्पष्ट होगा। जन्म समय में भी कुछ मिनट के अंतर के कारण लग्नांश तथा ग्रहों के अंशो में भी परिवर्तन होता है, इसके साथ ही नवमांश, सप्तमांश, दशमांश आदि वर्ग कुंडलियों को भी दृष्टि में रखा जाता है, ग्रहों के उपनक्षत्र को भी ध्यान रखके फलादेश किया जाता है। ज्योतिष कर्म सिद्धांत में विश्वास रखता है, जुड़वा बच्चों के पूर्व जन्म के कर्म भी अलग अलग होते है अतः इस जन्म में उन्हें उसी अनुसार फल मिलता है। यथा– अवश्यमेव भोक्तव्यम् कृतम् कर्म शुभाशुभम्...."।

ज्योतिष की विभिन्न शाखाओं में यमल शिशु विमर्श विस्तार से प्राप्त होता है, फलित की विभिन्न परंपरा जैसे पराशर, जैमिनी, नाड़ी, के पी आदि पद्धति में भी इस विषय पर विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है। वर्तमान युग में आधुनिकता के साथ ही बदलती जीवनशैली के कारण जुड़वा बच्चों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य यमल शिशु संबंधी विविध प्रासंगिक ज्योतिषीय सिद्धांतों को स्पष्ट करना है।

**कुंजी शब्द:-** संतान, जुड़वा बच्चे, यमल, ज्योतिष, फलित, अनुपचय, उपचय, चतुष्पद।

# भारतीय ज्ञान परम्परा में योग: एक दार्शनिक एवं सांस्कृतिक अनुशीलन

**डॉ. सीमा रानी**
सहायक प्राध्यापिका, संस्कृत विभाग,
के. वी. ए. डी. ए. वी. महिला महाविद्यालय, करनाल

**सारांश:-**

भारतीय ज्ञान परम्परा विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्ध ज्ञान-परम्पराओं में से एक है, जिसमें मानव-जीवन के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास को समग्र दृष्टि से स्वीकार किया गया है। इस परम्परा में 'योग' का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। योग केवल शारीरिक व्यायाम अथवा आसन-प्राणायाम की प्रक्रिया न होकर भारतीय दर्शन में चित्त की एकाग्रता, आत्मानुशासन, आत्मबोध तथा परम तत्त्व के साक्षात्कार का साधन माना गया है। वैदिक साहित्य से लेकर उपनिषद्, महाभारत, भगवद्गीता, पातञ्जलयोगसूत्र तथा हठयोग-ग्रन्थों तक योग की संकल्पना निरन्तर विकसित होती हुई दिखाई देती है।वैदिक साहित्य में तप, ध्यान, प्राण तथा आत्मानुशासन के विविध संकेत प्राप्त होते हैं। उपनिषदों में योग को इन्द्रिय-निग्रह, मनोनिग्रह एवं आत्मसाक्षात्कार के मार्ग के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। भगवद्गीता ने कर्म, ज्ञान, ध्यान एवं भक्ति को योग की व्यापक अवधारणा में

समाहित करते हुए योग को जीवन जीने की समत्वपूर्ण दृष्टि प्रदान की। महर्षि पतञ्जलि ने योग को व्यवस्थित दार्शनिक एवं साधनात्मक स्वरूप प्रदान करते हुए 'अष्टाङ्गयोग' का प्रतिपादन किया। इस प्रकार योग भारतीय ज्ञान परम्परा में शरीर से आरम्भ होकर मन, बुद्धि और अन्ततः आत्मचेतना तक पहुँचने वाली समग्र साधना-पद्धति के रूप में प्रतिष्ठित है।

बीजशब्दः- भारतीय ज्ञान परम्परा, योग, उपनिषद्, भगवद्गीता, पातञ्जलयोगसूत्र, अष्टाङ्गयोग, चित्तवृत्ति।

## "भारतीय ज्ञान परंपरा में नैतिकता: बौद्ध दर्शन के विशेष संदर्भ में।"

**Dr. Puran Kumar Saw**
Assist. Professor, PG Department of Philosophy, Nilamber Pitamber University, Medininagar, Palamu.

### सारः-

यह आलेख भारतीय ज्ञान परंपरा में नैतिकता के केंद्रीय महत्व को स्पष्ट करते हुए विशेष रूप से बौद्ध दर्शन की नैतिक दृष्टि का विवेचन करता है। भारतीय चिंतन परंपरा का मूल उद्देश्य केवल ज्ञान का संचय नहीं, बल्कि तत्त्व के बोध, आत्मसाक्षात्कार तथा जन्म-मरण के बंधन से मुक्ति की प्राप्ति माना गया है। इस संदर्भ में ज्ञानमीमांसा और तत्त्वमीमांसा को व्यवहार में परिणत करने के लिए नीतिमीमांसा को आधार माना गया है। इस आलेख में वैदिक, उपनिषद्, गीता, चार्वाक, जैन, सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक और वेदान्त आदि भारतीय दार्शनिक परंपराओं के प्रमुख नैतिक मूल्यों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इनमें सत्य, धर्म, आत्मसंयम, अहिंसा, निष्काम कर्म, स्वधर्म, अपरिग्रह, वैराग्य तथा आत्मज्ञान जैसे मूल्यों के विशेष महत्व को बताया गया है।

इस लेख में यह बताने का प्रयास किया गया है कि भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान साधन है मोक्ष को प्राप्त करने का और ज्ञान को नैतिकता के द्वारा हीं प्राप्त किया जा सकता है। इसी क्रम में बौद्ध दर्शन में नैतिकता का संबंध मानव जीवन में उपस्थित दुःख और उसके निरोध से जोड़ा गया है। चार आर्य सत्य- दुःख, दुःख-समुदय, दुःख-निरोध और

दुःख-निरोधगामिनी प्रतिपदा ये बौद्ध चिंतन का आधार हैं। तृष्णा को दुःख का प्रमुख कारण माना गया है तथा तृष्णा और आसक्ति के क्षय को निर्वाण की दिशा में आवश्यक सोपान माना गया है। जिसे बौद्ध नैतिकता के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इसमें पंचशील- अहिंसा, अस्तेय, कामाचार से विरति, सत्य और मादक पदार्थों से विरति नैतिक जीवन के प्रमुख अनुशासन हैं। मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा, क्षमा, अनासक्ति और प्रज्ञा इसके सकारात्मक नैतिक मूल्य हैं। साथ ही साथ अष्टांगिक मार्ग अनुकरण द्वारा निर्वाण प्राप्ति को जीवन का चरम लक्ष्य स्वीकार किया गया है।

इस आलेख का निष्कर्ष यह बताना है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली का उद्देश्य ज्ञान प्राप्त करके केवल भौतिकता या विलासिता को बढ़ावा देना नहीं है। बल्कि ज्ञान आत्म साक्षात्कार, आत्मबोध का साधन है। और नैतिकता को आत्मसात किए बिना ज्ञान का यह मूल लक्ष्य कभी भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है। यह पारमार्थिक लक्ष्य प्राप्ति का अत्यंत आवश्यक उपकरण है। साथ हीं साथ व्यवहार में भी नैतिक चिंतन केवल उचित-अनुचित के निर्धारण तक सीमित नहीं है, बल्कि व्यक्ति के विचार, वाणी, कर्म, चरित्र और सामाजिक दायित्व के परिष्कार पर बल देता है। वर्तमान समय के हिंसा, भ्रष्टाचार, उपभोक्तावाद, असहिष्णुता, पर्यावरणीय संकट तथा तकनीकी और कृत्रिम मेधा से उत्पन्न नैतिक संकटों के समाधान में बौद्ध करुणा, अहिंसा, सजगता और अष्टांगिक मार्ग अत्यंत प्रासंगिक हो सकते हैं। बल्कि इस तरह की समस्याएं नैतिक मूल्यों को आत्मसात नहीं करने के कारण हीं उत्पन्न हुईं हैं। अतः हमें अपने ज्ञान परंपरा में या आधुनिक ज्ञान प्रणाली में भी हमारे मनीषियों द्वारा बताए गए नैतिकता और मूल्य-शिक्षा को जोड़ना अत्यंत आवश्यक है।

शब्द कूंजी:- भारतीय ज्ञान परंपरा, तत्त्वमीमांसा, ज्ञानमीमांसा, नीतिमीमांसा, बौद्ध दर्शन, चार आर्य सत्य, अष्टांगिक मार्ग, पंचशील, करुणा, मैत्री, अहिंसा, तृष्णा, निर्वाण, प्रज्ञा, शील, समाधि, नैतिक चेतना, मूल्य-शिक्षा।

# भारतीय ज्ञान परंपरा मे गणित

**डॉ. कुसुमलता रजक**
सहायक प्राध्यापक, गणित एवं कंप्यूटर विभाग
शा मो हर गो गृह विज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय जबलपुर

**सारांश:-**

भारतीय ज्ञान परंपरा में गणित को अत्यंत उच्च स्थान प्राप्त है। आचार्य गणेश दैवज्ञ ने 'बुद्धिविलासिनी' ग्रंथ में गणित की परिभाषा दी है: "गण्यते संख्यायते तद्गणितम्" (अर्थात—जो परिकलन करता है और गिनता है, वह गणित है)। भारतीय गणित परंपरा का विकास वैदिक काल से लेकर शास्त्रीय एवं केरल संप्रदाय तक अत्यंत समृद्ध रहा है। इस पेपर में भारतीय ज्ञान परंपरा में गणित के योगदान को विस्तृत समझाया गया है तथा गणित से परम ज्ञान प्राप्ति के आसान मार्ग पर प्रकाश डाला गया है।

# सांख्य दर्शन में प्रकृति-तत्त्व का पर्यावरणीय अध्ययन

**प्रियंका एवं डॉ. टी० आर० भौरिया**
शोधच्छात्रा, शोध निर्देशक, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

**शोध-सारांश:-**

भारतीय दार्शनिक परम्परा में प्रकृति और मनुष्य का सम्बन्ध अत्यन्त प्राचीन एवं व्यापक चिन्तन का विषय रहा है। भारतीय मनीषा ने प्रकृति को केवल मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली सत्ता के रूप में न देखकर जीवन तथा जगत् की मूल आधारभूमि के रूप में स्वीकार किया है। सांख्य दर्शन इस दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है,

क्योंकि इसमें प्रकृति को जगत् के विकास का मूल कारण स्वीकार करते हुए उसके अव्यक्त से व्यक्त तथा सूक्ष्म से स्थूल रूप में विकास का क्रम प्रस्तुत किया गया है।सांख्य दर्शन में प्रकृति त्रिगुणात्मक एवं अव्यक्त अवस्था में मानी गई है। प्रकृति से महत्, महत् से अहंकार तथा अहंकार से तन्मात्राओं सहित अन्य तत्त्वों का विकास माना जाता है। पाँच तन्मात्राओं शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गन्ध से पाँच महाभूतों आकाश, वायु, तेज, आप और पृथ्वी की स्थूल अभिव्यक्ति का सिद्धान्त सांख्य की तत्त्वमीमांसा में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इन्हीं स्थूल तत्त्वों के आधार पर स्थूल प्राकृतिक जगत् की संरचना को समझा जा सकता है।भारतीय वाङ्मय के अन्य स्रोतों में भी प्रकृति, पञ्चमहाभूत, पृथ्वी, जल, वर्षा, अन्न तथा जीव-जगत् के परस्पर सम्बन्ध का विविध रूपों में विवेचन प्राप्त होता है। तैत्तिरीयोपनिषद् में आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी, पृथ्वी से औषधि, औषधि से अन्न और अन्न से पुरुष की क्रमिक अभिव्यक्ति का उल्लेख मिलता है। अथर्ववेद के पृथिवीसूक्त में पृथ्वी को माता तथा मनुष्य को उसका पुत्र कहा गया है। श्रीमद्भगवद्गीता में वर्षा, अन्न और प्राणियों के पारस्परिक सम्बन्ध का उल्लेख है। वेदान्तसार में भी सृष्टि-प्रक्रिया तथा तत्त्वों के क्रमिक विकास का विवेचन प्राप्त होता है।

इन विभिन्न विचारों के आधार पर प्रकृति के तत्त्वों, पंचमहाभूतों तथा उनसे सम्बद्ध जीव-जगत् के पारस्परिक सम्बन्ध को पर्यावरणीय दृष्टि से समझा जा सकता है। सांख्य दर्शन की प्रकृति-विकास प्रक्रिया में सूक्ष्म तत्त्वों से स्थूल जगत् तक का जो क्रम प्रस्तुत होता है, वह प्राकृतिक जगत् की संरचना को समझने का दार्शनिक आधार प्रदान करता है। इस क्रम में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश जैसे तत्त्व केवल सृष्टि के घटक न होकर जीव-जगत् के अस्तित्व से भी सम्बद्ध दिखाई देते हैं। अतः सांख्य दर्शन की प्रकृति-मीमांसा के आधार पर पर्यावरण को प्रकृति, पंचमहाभूत और जीव-जगत् के पारस्परिक सम्बन्ध की समग्र दृष्टि से समझने का प्रयास किया गया है।

# भारतीय ज्ञान परंपरा में मानवीय मूल्यों की अवधारणा : उपनिषदों के विशेष संदर्भ में

**डॉ. आरती यादव**
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
चौधरी चरण सिंह डिग्री कॉलेज, हैंवरा, सैफई, इटावा

**सारांश:-**

भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल उद्देश्य मनुष्य के सर्वांगीण विकास के साथ-साथ उसके जीवन को सत्य, धर्म, आत्मसंयम, त्याग, करुणा, स्वाध्याय, सह-अस्तित्व एवं लोककल्याण जैसे मानवीय मूल्यों से संपन्न करना है। भारतीय चिंतन में ज्ञान को केवल सूचनाओं अथवा बौद्धिक उपलब्धियों का संग्रह नहीं माना गया, अपितु उसे आत्मपरिष्कार और जीवन की सार्थकता का साधन माना गया है। इस दृष्टि से उपनिषद् भारतीय ज्ञान परंपरा के अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। इनमें आत्मा, ब्रह्म, जगत्, ज्ञान, कर्म और मानव-जीवन के परम प्रयोजन का गहन दार्शनिक विवेचन मिलता है।

प्रस्तुत शोधपत्र में प्रमुख उपनिषदों—विशेषतः ईशावास्य, कठ, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक एवं मुण्डक उपनिषद्—के आधार पर मानवीय मूल्यों की अवधारणा का विश्लेषण किया गया है। तैत्तिरीयोपनिषद् का "सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः" सत्य, धर्म और स्वाध्याय को आदर्श जीवन का आधार मानता है। मुण्डकोपनिषद् "सत्यमेव जयते नानृतम्" के माध्यम से सत्य को सर्वोच्च नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित करता है। कठोपनिषद् का रथरूपक आत्मसंयम और विवेकपूर्ण जीवन का संदेश देता है। ईशावास्योपनिषद् का "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा" त्याग, संयम और उत्तरदायी उपभोग की भावना को अभिव्यक्त करता है।

शोध का निष्कर्ष है कि उपनिषदों में मानवीय मूल्य किसी पृथक नैतिक उपदेश के रूप में नहीं, बल्कि आत्मविद्या पर आधारित समग्र जीवन-दृष्टि के रूप में विकसित होते हैं। वर्तमान समय में उपभोक्तावाद, नैतिक संकट, सामाजिक तनाव, पर्यावरणीय असंतुलन और

मानवीय संवेदनाओं के क्षरण की परिस्थितियों में उपनिषदों की मूल्य-दृष्टि विशेष रूप से प्रासंगिक है।

बीज-शब्द:- भारतीय ज्ञान परंपरा, उपनिषद्, मानवीय मूल्य, सत्य, धर्म, स्वाध्याय, आत्मसंयम, त्याग, आत्मविद्या, लोकमंगल।

# भारतीय ज्ञान परंपरा के विभिन्न आयामों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विवेचन

**डॉ. संजीव प्रसाद भट्ट**

असिस्टेंट प्रोफेसर संस्कृत राजकीय महाविद्यालय भूपतवाला हरिद्वार उत्तराखंड

**सारांश:-**

भारतीय ज्ञान परंपरा सम्पूर्ण विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्ध ज्ञान परंपराओं में प्रधान है। इसका विकास वेदों, उपनिषदों, पुराणों, वेदांगों, दर्शनों,ब्राह्मण आरण्यक ग्रन्थों, आयुर्वेद, योग, गणित, ज्योतिष, व्याकरण, साहित्य, कला, विज्ञान तथा विविध लोकपरंपराओं के माध्यम से हुआ है। इसमें मनुष्य, चराचर जगत , प्रकृति, समाज, ब्रह्मांड और चेतना के संबंधों को जानने का प्रयास किया गया है।

भारतीय ज्ञान परंपरा की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें ज्ञान को मात्र सैद्धांतिक चिंतन तक सीमित न रखकर जीवन के व्यावहारिकता से भी जोड़ा गया है। इसके अनेक आयामों में वैज्ञानिक, अवलोकन, तर्क, अनुभव, विश्लेषण, वर्गीकरण और व्यवस्थित चिंतन के उदाहरण मिलते हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन के उपरान्त यह स्पष्ट होता है कि इसके अनेक क्षेत्रों में प्रकृति के अवलोकन, तर्कपूर्ण चिंतन, मनन, अनुभवजन्य ज्ञान तथा व्यवस्थित पद्धतियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आयुर्वेद में शरीर, स्वास्थ्य, आहार और सुव्यवस्थित जीवनशैली का अध्ययन; योग में शारीरिक एवं मानसिक

आध्यात्मिक अनुशासन; गणित में संख्याओं, ज्यामिति और गणना का विकास; ज्योतिष गणित और खगोलविद्या में खगोलीय पिंडों की गति का विश्लेषण; और व्याकरण व दर्शन में भाषा, ज्ञान व तर्क का विश्लेषण इसके विविध आयामों को प्रदर्शित करते हैं। चुकि, भारतीय ज्ञान परंपरा के वैज्ञानिक मूल्यांकन के लिए पौराणिक तथ्यों, ग्रंथों में वर्णित सिद्धांतों व आधुनिक वैज्ञानिक प्रमाणों के मध्य स्पष्ट अंतर करना आवश्यक है। परंपरागत मान्यताओं को केवल पौराणिक होने के आधार पर वैज्ञानिक सिद्ध कदापि नहीं माना जा सकता, बल्कि उनका परीक्षण प्राप्त साक्ष्यों, तार्किक संगति, प्रयोगों और आधुनिक शोध-पद्धतियों के आधार पर किया जाना चाहिए। उपरोक्त प्रकार से भारतीय ज्ञान परंपरा का सम्यक् अध्ययन प्राचीन ज्ञान की अनेकानेक उपलब्धियों को समझने के साथ-साथ उसकी सीमाओं का समकालीन उपयोगिता का निष्पक्ष मूल्यांकन करने का अवसर प्रदान करता है। अगर हम भारतीय ज्ञान परंपरा के अंतर्गतआयुर्वेद, ज्योतिष शास्त्र, योग विज्ञान, आदि का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विवेचन करते हैं। आयुर्वेद को भी आज का वैज्ञानिक युग इसकी प्रामाणिकता को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मान गया है कि इससे शरीर परदुष्प्रभाव ना के बराबर पड़ते हैं जबकि एलोपैथ में शरीर पर दवाइयों का दुष्प्रभाव अधिक होता है आयुर्वेद में व्यक्ति का इलाज परंपरागतऔरवैज्ञानिक दृष्टि से होता है और आज का विज्ञान आयुर्वेद की ओर ही आश्रय ले रहा है ।क्योंकि यह बीमारी को जड़ मूल से समाप्त करता है। जबकि एलोपैथिक केवल बीमारी को रोकता है खत्म नहीं करता। इसलिए आज भारत ही नहीं बल्कि पूरा विश्व आयुर्वेद की शरण में आ रहा है आयुर्वेद को बढ़ावा दे रहा है पंचकर्मा, अक्क्षी तर्पण आदि आयुर्वेदिक अनेकानेक विधियों से इलाज करा रहा है। विज्ञान के पास जिन बीमारियों का इलाज बहुत कम है या है ही नहीं उन बीमारियों को आयुर्वेद के द्वारा आज दूर किया जा रहा है। इसके उपरांत हम अगर योग पर विवेचन करें तो आज भारत ही नहीं पूरा विश्व योग की शक्ति को मान गया है बाबा रामदेव ने योग को पूरे विश्व के जन-जन तक पहुंचा दिया है जिन बीमारियों में एलोपैथ, आयुर्वेद, होम्योपैथिक हार मान लेता है उन बीमारियों का उपचार योग और प्राणायाम के द्वारा संभव है। हमारी भारतीय ज्ञान परंपरा पूर्णतया वैज्ञानिक है और हमारे वैज्ञानिक ऋषियों ने इन बीमारियों का इलाज हजारों साल पहले हीआयुर्वेद, योग' प्राणायाम से बता दिया था जिस पर आज विज्ञान काम कर रहा है

लेकिन वह हमारी भारतीय ज्ञान परंपरा के आयुर्वेद योग प्राणायाम, को नकार नहीं सकता है अंतोगत्वा इनकी शरण में आकर व्यक्ति अपनी बीमारियों से निवृत्ति प्राप्त करता हैं। वैज्ञानिक रूप से ज्योतिष शास्त्र का हम विवेचन करें तो ज्योतिष शास्त्र हजारों साल पहलेआज से लेकर और आने वाले हजारों साल की गणना पहले ही कर ली है जिसमें विज्ञान इतना सामर्थ नहीं हैज्योतिष में पहले ही बताया गया है कि इस दिन सूर्य ग्रहण होगा इस दिन चंद्र ग्रहण होगा इस दिन अमावस्या होगी इस दिन कालरात्रि इस दिन होली होगी इस दिन दशहरा होगा इस दिन नवरात्र होगा इस दिन शिवरात्रि होगी इस दिन जन्माष्टमी होगी इस दिन गणेश चतुर्थी होगी इस दिन पितृपक्ष होंगे। आदि की गणना हजारों साल पहले हमारे ऋषि मुनियों ने कर दी जिसका लाभ हमें आज भी मिल रहा है और भविष्य में भी मिलता रहेगा विज्ञान केवल कुछ साल की गणना कर सकता है। इतनी लंबी गणना करना उनके बस की बात नहीं अन्तोगत्वा तो हम यही कह सकते हैं कि हमारा ज्योतिष शास्त्र पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है। तथ्य परख है इसे कोई नकार नहीं सकता है।

# योग दर्शन में निहित मूल्यपरक संवेदनाएँ : स्वच्छ पर्यावरण एवं स्वस्थ परिवेश के संदर्भ में

**डॉ. जगनारायण मिश्र**
सहायक प्रोफेसर, स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग
हरप्रसाद दास जैन महाविद्यालय, आरा
अंगीभूत इकाई, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार

**सारांश:-**

भारतीय दर्शन की समृद्ध परंपरा में मानव जीवन के सर्वांगीण विकास, नैतिक उन्नयन तथा आध्यात्मिक कल्याण के लिए मूल्यपरक संवेदनाओं को विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है। षड्दर्शनात्मक आस्तिक परंपरा तथा त्रिविध नास्तिक दार्शनिक परंपराओं में जीवन के विविध आयामों का विवेचन करते हुए दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति को परम पुरुषार्थ के रूप

में स्वीकार किया गया है। मुक्ति, मोक्ष, कैवल्य, अपवर्ग, निःश्रेयस तथा निर्वाण जैसी अवधारणाएँ इसी दार्शनिक लक्ष्य की अभिव्यक्तियाँ हैं। इन दार्शनिक मान्यताओं के मध्य पतंजलि प्रणीत योग दर्शन अपनी तात्त्विक गहनता, व्यावहारिक उपयोगिता तथा सार्वकालिक प्रासंगिकता के कारण विशिष्ट स्थान रखता है। योग दर्शन का उद्देश्य केवल शारीरिक स्वास्थ्य की प्राप्ति नहीं, बल्कि शरीर, मन, चित्त और आचरण के संतुलन के माध्यम से मानव जीवन को स्वस्थ, संयमित एवं कल्याणकारी बनाना भी है।

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में पर्यावरण प्रदूषण, प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन, अस्वस्थ जीवनशैली तथा मानसिक असंतुलन जैसी समस्याएँ मानव सभ्यता के समक्ष गंभीर चुनौती प्रस्तुत कर रही हैं। ऐसी परिस्थितियों में योग दर्शन में निहित मूल्यपरक संवेदनाएँ स्वच्छ पर्यावरण एवं स्वस्थ परिवेश की स्थापना के लिए महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करती हैं। वैदिक काल से आधुनिक युग तक भारतीय ज्ञान-परंपरा में शुचिता, स्वच्छता, पवित्रता, आत्मसंयम और प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता को विशेष महत्त्व दिया जाता रहा है। योग के अष्टांग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि—मानव के शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास के समन्वित आधार हैं। इनमें निहित अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शौच, संतोष, तप और स्वाध्याय जैसे मूल्य व्यक्ति को अनुशासित जीवन, सीमित उपभोग, संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति उत्तरदायी बनाते हैं।

योग, प्राकृतिक चिकित्सा एवं आयुर्वेद की बढ़ती वैश्विक स्वीकार्यता भारतीय ज्ञान-परंपरा की सार्वभौमिक उपयोगिता को रेखांकित करती है। 21 जून को अंतरराष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाया जाना भी योग की वैश्विक महत्ता, स्वस्थ जीवनशैली और समग्र कल्याण के प्रति बढ़ती जागरूकता का परिचायक है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य योग दर्शन की तात्त्विक एवं व्यावहारिक अवधारणाओं का विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित करना है कि पर्यावरणीय संतुलन, स्वच्छता, शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शांति तथा नैतिक चेतना एक-दूसरे के पूरक हैं। निष्कर्षतः योग दर्शन में निहित मूल्यपरक संवेदनाएँ व्यक्ति और प्रकृति के मध्य सामंजस्य स्थापित करने, पर्यावरणीय उत्तरदायित्व विकसित करने तथा स्वस्थ, स्वच्छ एवं संतुलित समाज के निर्माण में प्रभावी वैचारिक आधार प्रदान करती हैं।

**बीज शब्द**:- योग दर्शन, पतंजलि, मूल्यपरक संवेदनाएँ, अष्टांगयोग, यम-नियम, पर्यावरण संरक्षण, स्वच्छता, स्वस्थ परिवेश, भारतीय ज्ञान परंपरा, मानव कल्याण।

# काव्य-सौंदर्य : स्वरूप, तत्त्व एवं अभिव्यक्ति

**Anand Balwada**

## सारांश:-

काव्य साहित्य की एक प्रमुख विधा है, जिसके माध्यम से कवि अपने भावों, विचारों, अनुभूतियों और कल्पनाओं को कलात्मक रूप में अभिव्यक्त करता है। काव्य की प्रभावोत्पादकता और उसकी साहित्यिक महत्ता का प्रमुख आधार काव्य-सौंदर्य है। काव्य-सौंदर्य केवल शब्दों की मधुरता अथवा भाषा की आकर्षक शैली तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें भाव-सौंदर्य, विचार-सौंदर्य, भाषा-सौंदर्य, रस, अलंकार, छंद, बिंब, प्रतीक, कल्पना तथा संवेदनात्मक अभिव्यक्ति जैसे विविध तत्त्वों का समन्वय होता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य काव्य-सौंदर्य की अवधारणा, उसके प्रमुख तत्त्वों तथा हिंदी काव्य परंपरा में उसकी अभिव्यक्ति का आलोचनात्मक अध्ययन करना है।

भारतीय काव्यशास्त्र में भरतमुनि के रस-सिद्धांत, भामह एवं दंडी के अलंकार-सिद्धांत, वामन के रीति-सिद्धांत, आनंदवर्धन के ध्वनि-सिद्धांत तथा कुंतक के वक्रोक्ति-सिद्धांत ने काव्य-सौंदर्य की व्याख्या को विविध आयाम प्रदान किए हैं। इन सिद्धांतों के माध्यम से स्पष्ट होता है कि काव्य की सुंदरता भावों की अनुभूति, शब्द और अर्थ के सामंजस्य तथा कलात्मक अभिव्यक्ति में निहित होती है। हिंदी साहित्य की विभिन्न काव्यधाराओं—भक्तिकाल, रीतिकाल, छायावाद तथा आधुनिक काव्य—में काव्य-सौंदर्य के अलग-अलग रूप दिखाई देते हैं। भक्तिकाल में भक्ति एवं आध्यात्मिक अनुभूति, रीतिकाल में श्रृंगार और अलंकारिकता, छायावाद में प्रकृति, कल्पना एवं आत्मानुभूति तथा आधुनिक काव्य में सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदना और वैचारिक चेतना काव्य-सौंदर्य के महत्त्वपूर्ण आधार बनते हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक तथा तुलनात्मक पद्धतियों के माध्यम से काव्य-सौंदर्य के विभिन्न पक्षों का विवेचन किया जाएगा। अध्ययन का निष्कर्ष यह प्रतिपादित करता है कि काव्य-सौंदर्य एक बहुआयामी अवधारणा है, जो युग, समाज, संवेदना और कलात्मक दृष्टि के अनुसार अपना स्वरूप परिवर्तित करती रहती है। वास्तविक काव्य-सौंदर्य भाव, भाषा, विचार और शिल्प के संतुलित समन्वय में निहित है।

**बीज शब्द:-** काव्य-सौंदर्य, रस, अलंकार, ध्वनि, रीति, वक्रोक्ति, बिंब, प्रतीक, हिंदी काव्यशास्त्र।

# चरकसंहिता में वर्णित ऋतुचर्या एवं स्वास्थ्य-संरक्षण

**डॉ. मंजू पाण्डे**
सहायकाचार्या राजकीय महाविद्यालय चिन्यालीसौड़, उत्तरकाशी

**सारांश:-**

आयुर्वेद भारतीय ज्ञान-परम्परा की ऐसी जीवनोपयोगी चिकित्सा-पद्धति है, जिसमें रोग की चिकित्सा के साथ-साथ स्वास्थ्य-संरक्षण को विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है। आयुर्वेद के अनुसार मानव शरीर पर्यावरण तथा प्रकृति से निरन्तर प्रभावित होता रहता है। ऋतु-परिवर्तन के साथ वातावरण, तापमान, आर्द्रता, वायु, सूर्य के प्रभाव तथा आहार-विहार में परिवर्तन होता है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव शरीर की अग्नि, बल तथा दोषों की स्थिति पर पड़ता है। अतः प्रत्येक ऋतु के अनुकूल आहार-विहार का पालन स्वास्थ्य-संरक्षण के लिए आवश्यक माना गया है।

चरकसंहिता के सूत्रस्थान के षष्ठ अध्याय 'तस्याशितीय' में ऋतुचर्या का अत्यन्त व्यवस्थित विवेचन प्राप्त होता है। आचार्य चरक ने वर्ष को छह ऋतुओं में विभाजित करते हुए आदान एवं विसर्ग काल की संकल्पना प्रस्तुत की है तथा ऋतु के अनुसार शरीरबल, अग्नि, दोष एवं आहार-विहार में होने वाले परिवर्तनों का निरूपण किया है। हेमन्त, शिशिर,

वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा एवं शरद—इन छह ऋतुओं के लिए पृथक्-पृथक् पथ्यापथ्य का विधान किया गया है।

प्रस्तुत शोध-पत्र में चरकसंहिता में प्रतिपादित ऋतुचर्या की संकल्पना, ऋतु एवं त्रिदोष का सम्बन्ध, अग्नि एवं शरीरबल पर ऋतु का प्रभाव तथा स्वास्थ्य-संरक्षण में ऋतुचर्या की उपयोगिता का अध्ययन किया गया है। साथ ही वर्तमान जीवनशैली एवं स्वास्थ्य-विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में इसकी प्रासङ्गिकता पर भी विचार किया गया है।

# विनय-पत्रिका में दार्शनिक चिंतन और उपनिषदीय परंपरा

**डॉ. आनंद कुमार**

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, पीजीडीएवी महाविद्यालय सांध्य, दिल्ली विश्वविद्यालय

**सारांश:-**

तुलसीदास की विनय-पत्रिका प्रायः भक्ति-काव्य के रूप में पढ़ी जाती है, किंतु उसकी भावभूमि के नीचे भारतीय दर्शन की गहन परंपरा प्रवाहित है। यह कृति राम के दरबार में प्रस्तुत एक आत्मनिवेदन-पत्र के रूप में रची गई है, जिसमें देवताओं की स्तुति, संसार की नश्वरता का बोध, माया का विवेचन और जीव-ब्रह्म के संबंध पर विचार एक साथ मिलते हैं। ये विषय उपनिषदों के केंद्रीय प्रश्नों से सीधे जुड़ते हैं।

यह शोधालेख विनय-पत्रिका में आए माया, जीव, ब्रह्म, ज्ञान, वैराग्य और शरणागति जैसे दार्शनिक तत्त्वों का उपनिषदीय अवधारणाओं के आलोक में विश्लेषण करता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि तुलसी ने उपनिषदों के अद्वैत और विशिष्टाद्वैत से जुड़े चिंतन को जस का तस नहीं अपनाया, बल्कि उसे भक्ति की भाषा में ढाला। जहाँ उपनिषद जीव और ब्रह्म की एकता का निरूपण ज्ञान-मार्ग से करते हैं, वहाँ तुलसी उसी सत्य तक पहुँचने का सरल और सुलभ पथ शरणागत भक्ति में देखते हैं। इस प्रकार ज्ञान और भक्ति उनके यहाँ परस्पर विरोधी नहीं, पूरक सिद्ध होते हैं।

आलेख यह भी दर्शाता है कि तुलसी ने संस्कृत की शास्त्रीय दार्शनिक संपदा को लोकभाषा के पदों में उतारकर जन-सामान्य के लिए सुलभ बनाया। निष्कर्षतः विनय-पत्रिका भक्ति और दर्शन के बीच सेतु का काम करने वाली कृति है, जो भारतीय ज्ञान परंपरा की निरंतरता और उसके लोकीकरण का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करती है।

# रस-सिद्धांत के संदर्भ में रीतिकालीन कवियों के काव्य में प्रकृति का उद्दीपन विभाव रूप

## (विशेष संदर्भ बिहारी, देव और पद्माकर)

**विकास शर्मा**

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, पीजीडीएवी महाविद्यालय सांध्य, दिल्ली विश्वविद्यालय

**शोध सार:-**

भारतीय काव्यशास्त्र में रस की निष्पत्ति विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से मानी गई है। विभाव के दो भेद हैं: आलंबन और उद्दीपन। जहाँ नायक-नायिका रस के आलंबन हैं, वहाँ प्रकृति, ऋतु, चाँदनी, पवन, वन-उपवन आदि उद्दीपन बनकर भाव को जाग्रत और तीव्र करते हैं। संस्कृत काव्य-परंपरा में कालिदास के ऋतुसंहार से अमरुशतक तक प्रकृति का यह रसोन्मुख रूप विकसित हुआ और रीतिकाल में आकर काव्यशास्त्रीय लक्षणों के साथ और अधिक सुव्यवस्थित हो गया।

यह शोधालेख रस-सिद्धांत के आलोक में बिहारी, देव और पद्माकर के काव्य में प्रकृति के उद्दीपन-रूप का विश्लेषण करता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि तीनों कवियों के लिए प्रकृति स्वतंत्र वर्ण्य-विषय नहीं, बल्कि श्रृंगार रस की अनुभूति का साधन है। संयोग श्रृंगार में वसंत, चाँदनी और मलय-पवन सुख को बढ़ाते हैं, जबकि वियोग में वही उपादान विरह-ताप को तीव्र कर देते हैं। यह द्वंद्व भारतीय सौंदर्य-चिंतन की उस दृष्टि को प्रकट करता है

जिसमें बाह्य जगत और अंतर्जगत परस्पर अनुस्यूत हैं।

तुलनात्मक दृष्टि से बिहारी का प्रकृति-चित्रण दोहे की संक्षिप्तता में सांकेतिक और व्यंजक है, देव का चित्रण भाव-प्रवणता और ध्वन्यात्मक संगीतात्मकता से युक्त है, और पद्माकर के यहाँ वसंत आदि के वर्णन में गतिशील तथा जीवंत बिंब-योजना मिलती है। इस प्रकार शैलीगत भिन्नता के बावजूद तीनों में उद्दीपन-विधान की मूल प्रवृत्ति समान है।

**निष्कर्षतः-**

रीतिकवियों का प्रकृति-निरूपण परंपरा-निर्वाह मात्र नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान परंपरा की रस-दृष्टि का रचनात्मक विस्तार है, जिसमें प्रकृति मानवीय संवेदना की सहचरी बनकर काव्य को सौंदर्य और भावगत गहराई प्रदान करती है।

# भारतीय ज्ञान परंपरा की मूल अवधारणाएँ एवं विशेषताएँ : एक दार्शनिक अध्ययन

**Dr. Surendra Kumar Maurya**
Assis. Professor, Department of Philosophy
Baharagora college, Baharagora East Singhbhum, Jharkhand

**शोध-सार:-**

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीन एवं समृद्ध ज्ञान-परंपराओं में से एक है, जिसका उद्देश्य केवल सूचनाओं का संचय अथवा बौद्धिक ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि मनुष्य के समग्र जीवन का परिष्कार करना है। भारतीय चिंतन में ज्ञान को जीवन, आचरण, आत्मबोध, नैतिकता और लोककल्याण से संबद्ध माना गया है। वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, भगवद्गीता, पुराण, दर्शन-परंपराएँ, आयुर्वेद, योग, व्याकरण, न्याय, मीमांसा तथा अन्य ज्ञान-विधाएँ भारतीय ज्ञान परंपरा की व्यापकता को अभिव्यक्त करती हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में भारतीय ज्ञान परंपरा की मूल अवधारणाओं एवं उसकी प्रमुख विशेषताओं का

दार्शनिक दृष्टि से अध्ययन किया गया है। इसमें ज्ञान की अवधारणा, प्रमाण एवं सत्य, आत्मज्ञान, पुरुषार्थ चतुष्टय, धर्म एवं नैतिकता, गुरु-शिष्य परंपरा, समग्र जीवन-दृष्टि, प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व, तर्क एवं संवाद की परंपरा तथा लोककल्याण की भावना का विश्लेषण किया गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान को केवल सैद्धांतिक उपलब्धि न मानकर जीवन-परिवर्तन का साधन माना गया है। यहाँ ज्ञान, आचरण और अनुभूति के मध्य गहरा संबंध स्थापित किया गया है। वर्तमान समय में बढ़ती भौतिकता, नैतिक संकट, पर्यावरणीय असंतुलन और मानसिक तनाव की परिस्थितियों में भारतीय ज्ञान परंपरा की समग्र एवं मूल्यपरक दृष्टि विशेष रूप से प्रासंगिक दिखाई देती है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि भारतीय ज्ञान परंपरा अतीत की स्थिर विरासत न होकर ऐसी जीवंत ज्ञान-दृष्टि है, जो आधुनिक समाज को संतुलित, नैतिक और कल्याणकारी जीवन की दिशा प्रदान कर सकती है।

**प्रमुख शब्द:-** भारतीय ज्ञान परंपरा, ज्ञान, प्रमाण, आत्मज्ञान, धर्म, पुरुषार्थ, नैतिकता, समग्र दृष्टि, लोककल्याण।

# भारतीय ज्ञान परम्परा के पुनर्जागरण में वैदिक ज्योतिर्विद्या के पुनर्पाठ की अनिवार्यता

**डॉ. राजीव रंजन**

सहायक आचार्य, (ज्योतिष)

संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

**शोध-सार:-**

भारतीय ज्ञान परम्परा एक समग्र, बहुआयामी एवं जीवन-सापेक्ष ज्ञान-व्यवस्था है, जिसमें मानव, प्रकृति, समाज, ब्रह्माण्ड और काल के पारस्परिक सम्बन्धों का गहन विवेचन प्राप्त होता है। इस ज्ञान-परम्परा के विविध अंगों में वैदिक ज्योतिर्विद्या का विशिष्ट एवं

महत्त्वपूर्ण स्थान है। सामान्यतः ज्योतिर्विद्या को केवल ग्रह-नक्षत्रों तथा फलित-विचार से सम्बद्ध करके देखा जाता है, जबकि वैदिक परिप्रेक्ष्य में इसका मूल स्वरूप कालगणना, ऋतुचक्र, नक्षत्र-निरीक्षण, सूर्य एवं चन्द्र की गतियों, संवत्सर-विन्यास तथा वैदिक अनुष्ठानों के उचित काल-निर्धारण से सम्बद्ध रहा है। अतः भारतीय ज्ञान परम्परा के सम्यक् पुनर्मूल्यांकन के लिए वैदिक ज्योतिर्विद्या का आलोचनात्मक एवं अन्तर्विषयी पुनर्पाठ आवश्यक है।

प्रस्तुत शोधपत्र का प्रमुख उद्देश्य वैदिक ज्योतिर्विद्या की मूल ज्ञान-संरचना, उसके कालबोध, नक्षत्र-परम्परा, वेदाङ्ग ज्योतिषीय गणना-पद्धति तथा भारतीय सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर उसके प्रभाव का विश्लेषण करना है। शोध में वैदिक संहिताओं, ब्राह्मण ग्रन्थों तथा वेदाङ्ग ज्योतिष से प्राप्त काल एवं खगोलीय अवधारणाओं का पाठालोचनात्मक एवं ऐतिहासिक पद्धति से अध्ययन प्रस्तावित है। इसके साथ ही प्राचीन भारतीय कालगणना, पंचाङ्ग-परम्परा तथा आधुनिक खगोल-विज्ञान के मध्य तुलनात्मक विमर्श की सम्भावनाओं का भी परीक्षण किया गया है। अध्ययन में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि प्राचीन भारतीय ज्योतिर्विद्या को आधुनिक विज्ञान का पूर्णतया पूर्वरूप सिद्ध करना अथवा उसे मात्र अन्धविश्वास मानकर अस्वीकार करना, दोनों ही दृष्टियाँ ऐतिहासिक एवं अकादमिक दृष्टि से अपर्याप्त हैं। शोध के निष्कर्ष से स्पष्ट होता है कि वैदिक ज्योतिर्विद्या भारतीय सभ्यता के विकसित कालबोध, प्रकृति-अवलोकन, आकाशीय निरीक्षण तथा गणनात्मक चिन्तन की महत्त्वपूर्ण अभिव्यक्ति है। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, ऋतु, मास, पक्ष, अयन और संवत्सर जैसी अवधारणाओं ने भारतीय धार्मिक, कृषि, सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन की समय-संरचना को प्रभावित किया है। वेदाङ्ग ज्योतिष इस ज्ञान को व्यवस्थित गणनात्मक आधार प्रदान करता है। अतः इसका पुनर्पाठ केवल ज्योतिष के इतिहास का अध्ययन नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान-परम्परा के वैज्ञानिक, दार्शनिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय आयामों की पुनरान्वेषण का सशक्त माध्यम है। समकालीन सन्दर्भ में मूल ग्रन्थों के पाठालोचन, ऐतिहासिक परीक्षण, गणितीय पुनर्गणना तथा आधुनिक खगोल-विज्ञान के साथ अन्तर्विषयी संवाद के माध्यम से वैदिक ज्योतिर्विद्या का पुनर्मूल्यांकन भारतीय ज्ञान परम्परा के वास्तविक एवं विवेकपूर्ण पुनर्जागरण में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

# धर्म-विज्ञान और भारत

**डॉ. गोपीराम शर्मा**
आचार्य, हिंदी विभाग
डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान

**शोध-सार:-**

प्रस्तुत शोध-आलेख में भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में 'धर्म' और 'विज्ञान' के अंतर्संबंधों का गहन विश्लेषणात्मक अनुशीलन किया गया है। पाश्चात्य ज्ञानोदय (Enlightenment) और आधुनिकतावादी विमर्श ने ज्ञान-विज्ञान को धर्म और प्रकृति के विरोध में खड़ा किया, जिसके फलस्वरूप उपभोक्तावाद, पर्यावरण संकट, यांत्रिकता और संत्रास जैसी विसंगतियाँ उत्पन्न हुईं। पश्चिम में धर्म (Religion) और विज्ञान के मध्य संघर्ष की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि रही है, जबकि भारतीय मनीषा में 'धर्म' कभी पूजा-पद्धति या संकीर्ण आस्था तक सीमित नहीं रहा; अपितु वह 'धारणाद् धर्म इत्याहुः' के अनुसार सार्वभौमिक जीवन-मूल्यों, कर्तव्य-बोध और ब्रह्मांडीय संतुलन का परिचायक रहा है। यहाँ ऋषि मात्र दार्शनिक नहीं, अपितु गहन अन्वेषक (रिसर्चर) थे, जिन्होंने अनुभूत वैज्ञानिक सत्यों को जनकल्याण हेतु नैतिक मूल्यों और परंपराओं का स्वरूप प्रदान किया। यह आलेख आधुनिकता एवं उत्तर-आधुनिकता की सीमाओं को रेखांकित करते हुए यह प्रतिपादित करता है कि समकालीन वैश्विक संकटों—मानसिक तनाव, सांस्कृतिक विघटन और पारिस्थितिकीय असंतुलन—का समाधान भारतीय समन्वयवादी दृष्टि में ही निहित है, जहाँ विज्ञान आँख है और धर्म उसका संवेदनशील हृदय।

**बीज शब्द:-** भारतीय ज्ञान प्रणाली, धर्म और विज्ञान, आधुनिकता विमर्श, प्रबोधन परियोजना, उत्तर-आधुनिकता, सनातन दृष्टि, सार्वभौमिक मूल्य, समन्वय।

# "शब्द से रस तक: भारतीय ज्ञान परंपरा में भाषिक सौंदर्य और डिजिटल युग की काव्य-संवेदना का अंतर्संबंध"

**डॉ. रूचि पालीवाल**

सहायक आचार्य गुरु नानक कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय

**शोध-सार:-**

भारतीय ज्ञान परंपरा में भाषा केवल विचारों के संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि ज्ञान, अनुभूति, संवेदना और सौंदर्यबोध की सशक्त अभिव्यक्ति रही है। भारतीय काव्यशास्त्र में शब्द, अर्थ, ध्वनि, व्यंजना, अलंकार और रस के माध्यम से काव्य की सौंदर्यात्मक संरचना तथा सहृदय के भावानुभव का सूक्ष्म विवेचन किया गया है। भरतमुनि का रस-सिद्धांत, आनंदवर्धन का ध्वनि-सिद्धांत तथा कुंतक का वक्रोक्ति-सिद्धांत काव्य की भावात्मक प्रभावशीलता, अर्थ की बहुस्तरीयता और भाषिक विशिष्टता को समझने के महत्त्वपूर्ण आधार हैं। वर्तमान डिजिटल युग में कविता के सृजन, प्रकाशन, प्रसार और पाठ की प्रक्रियाओं में आए परिवर्तनों ने इन पारंपरिक काव्य-सिद्धांतों की समकालीन प्रासंगिकता के अध्ययन को महत्त्वपूर्ण बना दिया है।

प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य भारतीय ज्ञान परंपरा में विकसित भाषिक एवं काव्यशास्त्रीय अवधारणाओं और डिजिटल युग की समकालीन हिंदी कविता के अंतर्संबंध का विश्लेषण करना है। इसके अंतर्गत यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि डिजिटल माध्यमों पर उपलब्ध कविताओं में शब्द, अर्थ, ध्वनि, बिंब, प्रतीक और भाव किस प्रकार काव्य-सौंदर्य का निर्माण करते हैं तथा भारतीय काव्यशास्त्र के सिद्धांत इनकी व्याख्या में किस प्रकार सहायक हो सकते हैं। साथ ही, डिजिटल माध्यमों के विस्तार से उत्पन्न अभिव्यक्ति की नवीन संभावनाओं और काव्य-पाठ की बदलती प्रवृत्तियों का भी अध्ययन किया जाएगा। विशेष रूप से नई पीढ़ी और विद्यार्थियों की साहित्यिक अभिरुचि के संदर्भ में डिजिटल कविता की भूमिका पर विचार किया जाएगा।

यह अध्ययन विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक पद्धति पर आधारित होगा। इसके लिए

भारतीय काव्यशास्त्र के चयनित सिद्धांतों का सैद्धांतिक विवेचन करते हुए डिजिटल माध्यमों पर प्रकाशित चयनित हिंदी कविताओं की भाषिक संरचना, भावाभिव्यक्ति और सौंदर्यात्मक विशेषताओं का विश्लेषण किया जाएगा। अध्ययन के माध्यम से यह प्रतिपादित करने का प्रयास होगा कि भारतीय ज्ञान परंपरा के काव्यशास्त्रीय सिद्धांत समकालीन डिजिटल कविता को समझने के लिए उपयोगी वैचारिक आधार प्रदान करते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत शोध भारतीय काव्य-दृष्टि और आधुनिक डिजिटल साहित्य के बीच संवाद स्थापित करते हुए भाषिक सौंदर्य, काव्य-संवेदना तथा साहित्यिक चेतना की समकालीन प्रासंगिकता को रेखांकित करेगा।

बीज शब्द:- भारतीय ज्ञान परंपरा, भाषा-विज्ञान, भाषिक सौंदर्य, भारतीय काव्यशास्त्र, रस-सिद्धांत, ध्वनि-सिद्धांत, डिजिटल हिंदी कविता, काव्य-संवेदना।

# शैक्षिक सुधारों की आवश्यकता: मूल्यपरक शिक्षा, शिक्षक स्वायत्तता एवं राष्ट्रबोध का परिप्रेक्ष्य

**डॉ. संजीव कुमार बंसल एवं डॉ. भूपेंद्र कुमार महेंद्रा**

आचार्य, वाणिज्य विभाग,

श्रीमती नर्बदा देवी बिहाणी राजकीय महाविद्यालय, नोहर (हनुमानगढ़),

सह आचार्य, वाणिज्य विभाग,

डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान

**शोधसार:-**

प्रस्तुत शोध आलेख भारतीय उच्च शिक्षा व्यवस्था के वर्तमान परिदृश्य, उसकी अंतर्निहित चुनौतियों तथा उसमें अपेक्षित गुणात्मक सुधारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में गुरु-शिष्य परंपरा केवल ज्ञान के औपचारिक आदान-प्रदान तक सीमित न होकर समग्र जीवन निर्माण और आध्यात्मिक चेतना का माध्यम थी। आधुनिक काल में औपनिवेशिक विरासत और बाज़ारोन्मुख प्राथमिकताओं

के कारण शिक्षा का उद्देश्य मात्र रोजगार प्राप्ति और उपाधि वितरण तक सिमट गया है। परिणामस्वरूप युवाओं में राष्ट्रबोध, नैतिक मूल्य, कर्तव्यनिष्ठा और स्वावलम्बन का ह्रास देखने को मिल रहा है। दूसरी ओर शिक्षकों पर बढ़ते गैर-शैक्षणिक, लिपिकीय और प्रशासनिक दायित्वों ने शिक्षण संस्थाओं को औपचारिकता में बदल दिया है। प्रस्तुत शोध में मूल्यपरक शिक्षा, शिक्षक की स्वायत्तता, प्रशासनिक संरचना के पुनर्गठन तथा विज्ञान, धर्म और अध्यात्म के समन्वय के आधार पर भारतीय उच्च शिक्षा को संस्कारक्षम और सामर्थ्यवान बनाने हेतु ठोस नीतिगत सुधार प्रस्तावित किए गए हैं।

बीज शब्द:- शैक्षिक सुधार, गुरु-शिष्य परंपरा, शिक्षक स्वायत्तता, राष्ट्रबोध, मूल्यपरक शिक्षा, उच्च शिक्षा प्रशासन, राष्ट्रीय शिक्षा नीति।

# भारतीय संस्कृति में प्रकृति संरक्षण का वैज्ञानिक संदेश:

**डॉ. विष्णुदत्त तिवारी**

(प्र.स्ना.अ. संस्कृत)

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर,

सी. एम. श्री स्कूल, सेक्टर-6, द्वारका, नई दिल्ली

**शोध-सार:-**

आधुनिक युग में विश्वव्यापी पर्यावरण संकट, ग्लोबल वार्मिंग, ओजोन परत में छिद्र और प्रदूषण मानव जाति के सामने सबसे बड़ी चुनौती बनकर उभरे हैं। इस आधुनिक परिस्थिति में, प्राचीन भारतीय चिंतन और वैदिक साहित्य में निहित पर्यावरण चेतना अत्यंत प्रासंगिक हो जाती है। 'पर्यावरण' शब्द परि तथा आङ् उपसर्ग पूर्वक वृज् 'वरणे' धातु से ल्युट् प्रत्यय के योग से निष्पन्न होता है, जिसका तात्पर्य चारों ओर से आवृत आवरण या घेरा है। भारतीय संस्कृति का मूल स्रोत वेद हैं, जहाँ हजारों वर्ष पूर्व ऋषि-महर्षियों ने मानव जीवन के कल्याण के लिए प्रकृति के सानिध्य और उसके संरक्षण के महत्व को बारीकी से

समझा था। वैदिक काल से ही भूमि को माता, आकाश को पिता और प्रकृति के विभिन्न तत्वों को दिव्य स्वरूप मानकर उनकी पूजा और संरक्षण का विधान किया गया है।

**मानव और पर्यावरण: वैदिक दृष्टिकोण:-**

वैदिक साहित्य में मानव और प्रकृति का संबंध परस्पर आश्रित माना गया है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में इस बात की आशंका व्यक्त की गई थी कि मानव द्वारा प्रकृति के अपने कर्तव्यों की उपेक्षा करने से भयानक संकट उत्पन्न हो सकते हैं। अथर्ववेद (12.1.8) में पृथ्वी के हृदय का उल्लेख करते हुए बताया गया है कि जिस प्रकार हृदय की धड़कन पर प्राणी का जीवन निर्भर है, उसी प्रकार आंतरिक स्वरूप के नष्ट होते ही संपूर्ण ब्रह्मांड का नाश निश्चित है। भारतीय संस्कृति में पेड़-पौधों जैसे वट, पीपल, आंवला और तुलसी आदि का पूजन केवल आस्तिकरण नहीं है, बल्कि इसके पीछे गहरी वैज्ञानिक और पर्यावरण-रक्षक भावना निहित है। जैसे तुलसी का पौधा रात्रि और दिन दोनों समय ऑक्सीजन छोड़ता है, और पीपल आदि वृक्ष पर्यावरण को शुद्ध रखने में अद्भुत भूमिका निभाते हैं।

पर्यावरण और अग्निहोत्र (वायुमंडल शुद्धिकरण):-

वैदिक परंपरा में वायुमंडल की शुद्धि के लिए अग्निहोत्र (यज्ञ) को अनिवार्य और अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। अग्निहोत्र में शुद्ध घृत, गूगल, पिप्पली, अजश्रृंगी आदि औषधियों की आहुति देने से वायुमंडल में फैले विषाणुओं और रोगाणुओं का नाश होता है। आयुर्वेद के ग्रंथों चरक, योगरत्नाकर आदि में भी ऐसे योग वर्णित हैं जिनकी धूनी से श्वास रोग और अन्य व्याधियां दूर होती हैं। यजुर्वेद (21.6) और अथर्ववेद (19.38.1) में अग्निहोत्र को एक ऐसी नाव के रूप में दर्शाया गया है जो प्रदूषण को दूर करके यजमान और समाज की रक्षा करती है। यह अग्निहोत्र जल, मिट्टी और वायु तीनों के प्रदूषण को नियंत्रित करने की एक शाश्वत वैज्ञानिक विधि है।

**स्थलमंडल, जलमंडल और वायुमंडल संरक्षण:-**

- स्थलमंडल: अथर्ववेद के भूमि सूक्त में पृथ्वी को 'माता' और स्वयं को उसका पुत्र (माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः) कहा गया है। इसमें पृथ्वी पर पाए जाने वाले खाद्य पदार्थों, औषधियों और वनस्पतियों के संतुलित उपयोग और उन्हें किसी भी प्रकार की

क्षति न पहुँचाने का निषेध किया गया है।

- जलमंडल: ऋग्वेद में जल को दिव्य तत्व और वरुण का स्वरूप माना गया है। जल को प्राण का संचार करने वाला 'परम रस' और औषधि स्वरूप स्वीकार किया गया है। आधुनिक काल में पवित्र नदियों (जैसे गंगा) के प्रदूषण के संदर्भ में वैदिक जल-संरक्षण के नियम अत्यंत मार्गदर्शक हैं।
- वायुमंडल: शुद्ध वायु को अमूल्य निधि मानते हुए वैदिक ऋषि-मुनियों ने वायु को आयु वर्धक और औषधि रूप में स्वीकार किया है। प्रकृति की सभी शक्तियों (सूर्य, चंद्र, अग्नि, वायु और नदियाँ) को देवता स्वरूप मानकर उनके प्रति श्रद्धा और पूजन का भाव प्रकृति के प्रति दुरुपयोग को रोकने की एक प्राचीन मनोवैज्ञानिक तकनीक है।

**उपसंहार और निष्कर्ष:-**

शोध-पत्र का निष्कर्ष यह है कि आधुनिक भौतिकवादी और विकासवादी युग में जब पर्यावरण संकट चरम सीमा पर है, तब प्राचीन भारतीय ग्रंथों और वेदों में वर्णित निर्देश हमारे लिए एकमात्र समाधान हैं। प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करना, उसके मूल स्वरूप को नष्ट किए बिना उसका उचित संरक्षण करना और औषधि-वृक्षों की पूजा-अर्चना के माध्यम से उनकी रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है। यदि मानव वैदिक विधानों और निषेधात्मक पक्षों का पालन करे, तो आधुनिक पर्यावरण संकट से सफलता पूर्वक निपटा जा सकता है।

**मुख्य शब्द:-** पर्यावरण संरक्षण, वैदिक चिंतन, अग्निहोत्र, भूमि सूक्त, भारतीय संस्कृति, वैज्ञानिक संदेश, जल संरक्षण, वनस्पति विज्ञान।

# समकालीन वैश्विक संकट और भारतीय दर्शन की व्यावहारिक प्रासंगिकता: एक समालोचनात्मक अनुशीलन

**कृष्णा व्यास जोशी**
बनस्थली विद्यापीठ

**शोध-सार:-**

प्रस्तुत शोध-पत्र इक्कीसवीं सदी के बहुआयामी वैश्विक संकटों—मानसिक तनाव, नैतिक विचलन, पर्यावरणीय असंतुलन तथा सामाजिक संघर्षों—के परिप्रेक्ष्य में भारतीय दर्शन की व्यावहारिक उपादेयता का समालोचनात्मक विश्लेषण करता है। द्रष्टव्य है कि जीवन मार्ग में प्रत्येक क्षेत्र में मन और तन को शांत करने के लिए एक निश्चित संयम शैली को स्वयं में प्राप्त करे, पूर्ण अवस्था को प्राप्त कर सकते है। जिससे समस्त प्राणी जन आलोकित हो सके। समकालीन सभ्यता जहाँ भौतिक समृद्धि और तकनीकी विकास के शिखर पर है, वहीं आंतरिक संतुलन और मानवीय मूल्यों के स्तर पर गंभीर शून्यता का सामना कर रही है। भारतीय दर्शन मात्र अमूर्त तत्व-मीमांसा न होकर एक व्यावहारिक जीवन-दृष्टि प्रस्तुत करता है, जिसका मूल लक्ष्य समग्र शांति और आत्यंतिक दुःखनिवृत्ति है। अध्ययन में विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए यह रेखांकित किया गया है कि सांख्य और योग दर्शन की चित्तवृत्ति-निरोध एवं क्लेश-मुक्ति की प्रविधियाँ, तथा श्रीमद्भगवद्गीता का 'स्थितप्रज्ञ' व 'कर्मयोग' का आदर्श आधुनिक मानसिक अवसाद और बर्नआउट के समाधान में मनोवैज्ञानिक चिकित्सा सदृश कार्य करते हैं। पर्यावरणीय संकट के समाधान हेतु ईशावास्योपनिषद् का संयमित उपभोग सिद्धांत ('तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा:') और जैन परंपरा का 'अपरिग्रह' प्रकृति-दोहन की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाते हैं। इसके अतिरिक्त, जैन दर्शन का अनेकांतवाद और अद्वैत वेदांत की एकात्म चेतना वैचारिक असहिष्णुता को समाप्त कर वैश्विक बंधुत्व तथा सौहार्दपूर्ण सह-अस्तित्व की सुदृढ़ आधारशिला रखते हैं। निष्कर्षतः, यह अध्ययन

स्थापित करता है कि भारतीय दर्शन का पुनरावलोकन अतीतगामी मोह नहीं, बल्कि

वैज्ञानिक युग में मानव कल्याण, सतत विकास और नैतिक विवेक की पुनर्स्थापना के लिए अपरिहार्य मार्गदर्शक है। मन की अवस्थाओ को समझना ही दर्शन है। अवस्थाओ को पूर्ण अर्जन कर समस्याओं का निवारण ही दर्शन कहलाते है।

**प्रमुख शब्दः-** भारतीय दर्शन, समकालीन प्रासंगिकता, मानसिक स्वास्थ्य, स्थितप्रज्ञ, अपरिग्रह, अनेकांतवाद, पर्यावरणीय नीतिशास्त्र, अद्वैत वेदांत।

# भारतीय ज्ञान परम्परा में वैश्विक दृष्टि

## (वेदों के विशेष सन्दर्भ में)

**डॉ. पूजा सिंह** सहायक आचार्या, संस्कृत विभाग

ज्वाला देवी विद्या मन्दिर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कानपुर, उत्तर प्रदेश

शोध-सारः-

भारतीय ज्ञान परम्परा मानव सभ्यता की उन महत्त्वपूर्ण बौद्धिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं में से है जिनमें मानव, प्रकृति, समाज और ब्रह्माण्ड के पारस्परिक सम्बन्धों पर गहन चिन्तन किया गया है। इस परम्परा के प्राचीनतम स्रोत वेद हैं। वैदिक वाङ्मय में सामूहिक एकता, मैत्री, सह-अस्तित्व, लोक-कल्याण, पर्यावरणीय चेतना और शान्ति से सम्बन्धित अनेक विचार उपलब्ध होते हैं। इन विचारों का महत्त्व केवल प्राचीन भारतीय समाज तक ही सीमित नहीं था अपितु समकालीन वैश्विक परिदृश्य में भी इनकी उपयोगिता देखी जाती है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद में वर्णित वैश्विक दृष्टि की व्याख्या करना है। जैसे- ऋग्वेद में सामञ्जस्य परक मन्त्र, यजुर्वेद में मैत्री एवं शान्ति की भावना, सामवेद में सामूहिक सांस्कृतिक अभिव्यक्ति तथा अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में पृथ्वी और मनुष्य के मध्य मातृत्व भाव से पर्यावरणीय चेतना का अध्ययन करना है। वैदिक विचारों के माध्यम से वर्तमान में सांस्कृतिक संवाद, नैतिक शिक्षा, पर्यावरण संरक्षण,

सामाजिक समरसता तथा शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के विमर्श को उद्घाटित किया जायेगा।

**बीज शब्द:-** भारतीय ज्ञान परम्परा, वैश्विक परिदृश्य, वैदिक वाङ्मय, लोक-कल्याण, पर्यावरणीय चेतना, सामाजिक समरसता।

# ग्रामीण विकास में विज्ञान, शिक्षा और प्रौद्योगिकी की भूमिका का अध्ययन

**डॉ. बरखा घावरी**

सहायक आचार्य (समाज शास्त्र)

राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय उदयपुर (राजस्थान)

## सारांश:-

ग्रामीण विकास भारत के समग्र विकास का आधार है क्योंकि देश की बड़ी आबादी आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। विज्ञान, शिक्षा और प्रौद्योगिकी ग्रामीण समाज के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास के महत्वपूर्ण साधन हैं। आधुनिक कृषि तकनीकों, डिजिटल शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं तथा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के माध्यम से ग्रामीण जीवन में व्यापक परिवर्तन आए हैं। यह शोध-पत्र ग्रामीण विकास में विज्ञान, शिक्षा एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका का विश्लेषण करता है तथा इनके माध्यम से उत्पन्न अवसरों और चुनौतियों का अध्ययन प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द:- ग्रामीण विकास, विज्ञान, शिक्षा, प्रौद्योगिकी, डिजिटल इंडिया, कृषि, सूचना प्रौद्योगिकी।

# भारतीय ज्ञान परम्परा का शैक्षिक आयाम

**मीनाक्षी सिंह रावत**

सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग

उत्तराखंड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार

**सारांश:-**

राष्ट्र की बहुआयामी बौद्धिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, सांस्कृतिक एवं व्यावहारिक विरासत का प्रतिनिधित्व करने में भारतीय ज्ञान परम्परा की भूमिका अग्रणीय है। इसको विस्तार देने में वैदिक चिन्तन, बौद्ध, जैन, न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, वेदान्त, गणित, चिकित्सा, भाषाविज्ञान, साहित्य, कला, कृषि तथा लोक एवं जनजातीय ज्ञान प्रणालियों ने अपने दायित्व का निर्वहन किया है। शैक्षिक दृष्टिकोण से यह परम्परा ज्ञानार्जन, तर्क-विमर्श, स्वाध्याय, गुरु-शिष्य संवाद, नैतिक आचरण, अनुभवात्मक अधिगम तथा सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे महत्त्वपूर्ण आयामों के द्वारा भारतीय ज्ञान परम्परा के मार्ग को प्रशस्त करने का कार्य करती है । वर्तमान समय में आलोचनात्मक चिन्तन, मानवीय संवेदनशीलता, सृजनात्मकता, पर्यावरणीय चेतना तथा उत्तरदायी नागरिकता जैसे गुणात्मक तत्वों को विद्यार्थियों के व्यवहारात्मक प्रदर्शन में उतरोतर ह्रास सा होता दिखाई दे रहा है जिस कारण से शिक्षण संस्थाओं के लिए यह उभरती हुईं सम-सामायिक विषम चुनोती बनती जा रही है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य भारतीय ज्ञान परम्परा के प्रमुख शैक्षिक आयामों का विश्लेषण कर दार्शनिक आधारों को स्पष्ट करना तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सन्दर्भ में भारतीय ज्ञान परम्परा की समकालीन उपयोगिता को दर्शाना है ताकि परम्परागत ज्ञान का अध्ययन ऐतिहासिक प्रामाणिकता, वैज्ञानिक परीक्षण, आलोचनात्मक विवेक, सामाजिक समावेशन तथा आधुनिक शैक्षिक आवश्यकताओं के आधार पर सुनिश्चित की जा सके।

**मुख्य शब्द:-** भारतीय ज्ञान परम्परा, शैक्षिक दर्शन, मूल्यपरक शिक्षा, समग्र विकास, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020.

# CONCEPT OF TRIGUNA SIDDANTHA AND ITS APPLIED ASPECTS

**Dr. S. Mahalakshmi**
Assistant professor (Department of Samhita Siddanta and Sanskrit), Aarihant Ayurvedic Medical college and research Institute, Gandhinagar Gujarat

**Abstract:-**

Ayurveda is defined as the science which comprises knowledge of life span and perception of the status of the living body. The lifespan depends on the constitution of the person. Acharya Charaka states that the body acts in conformity of mind & mind acts in conformity to the body. Sattva, rajas and tamas are the three gunas basically the cosmic qualities or energies also called as Maha gunas. They take part in the creation of universe and also make up the qualities of mind. In equilibrium, the three Gunas preserve the mind and maintaining it in a healthy state. Any disturbance in this equilibrium results in various types of mental disorders. This Triguna represents the essential energies of the mind. Individual's personality is genetically determined and dependent on predominance of Triguna. Acharya Susrutha mentions that appropriate treatment should be given after understanding the nature of persons of these constitutions. These psychological features are not restricted to human alone, but are also attributed to almost all living beings, including the food we eat, animals around us and all other elements in the environment we live in.

**Keywords:-** Triguna, Manasa prakriti, sattva, personality trait, Maha gunas.

# Yoga and Neuroplasticity: A Convergent-Demand Model

**Dr. Saanvi Chaudhary**
(MD acupressure)

**Abstract:-**

Yoga, a core discipline of the Indian Knowledge Tradition, is increasingly studied for its effects on brain health, cognition, and emotional well-being. Research reports that yoga and meditation are associated with differences in brain regions for attention, body awareness, and emotion regulation. Most studies, however, treat yoga as a single intervention and do not explain why combining its elements might matter. This paper proposes the Convergent-Demand Model: yoga promotes neuroplasticity through four simultaneous demands, namely interoceptive attention (awareness of bodily sensations), posture and balance control, paced breathing, and emotion

regulation under mild physical challenge. The paper reviews evidence for each demand, derives four testable predictions, and outlines a 24-week, four-arm randomized trial with brain imaging that compares integrated yoga, seated meditation, aerobic and balance exercise, and an active control. No new data are reported. The model aims to move research from asking whether yoga works to asking which components, in which combinations, change which neural systems, linking the traditional yogic understanding of mind-body integration with contemporary neuroscience.

## The Inner Sovereign: Reflections of Adhyātma in Kautilya's Arthaśāstra

**Hitesh Jadav**

**Abstract:-**

While Kautilya's Arthaśāstra is widely celebrated as a pragmatic manual of statecraft (Daṇḍanīti), political economy (Vārttā), and realpolitik, its operational apparatus rests upon an indispensable spiritual and psychological foundation: Adhyātma—the science of inner self-governance. In classical Sanskrit thought, Adhyātma denotes the knowledge of the inner self, moral consciousness, and spiritual realization. In Kautilya's vision, external governance over an empire is impossible without internal mastery over the mind and senses. By elevating philosophical inquiry (Ānvīkṣikī) to the pinnacle of all sciences, Kautilya establishes that true sovereignty begins within. Through the rigorous conquest of the six inner enemies (Indriyajaya), the cultivation of the Sage-King ideal (Rājarṣi), and the preservation of cosmic-social duties (Svadharma), governance is transformed from mere mechanics of power into a sacred, selfless duty (Yajña). Ultimately, Adhyātma anchors Kautilyan statecraft, ensuring that temporal authority serves the supreme end of public welfare (Yogakṣema).

## The Historical Evolution of Traditional Knowledge in India: Society, Culture and Continuity

**Raeesah Amin**
Assistant Professor (ITEP- History) Dispur College

**Abstract:-**

Traditional knowledge has played a significant role in shaping the social, intellectual, economic, cultural, and ecological life of Indian society. Rather than

being confined to religious texts or formal centres of learning, knowledge in the Indian historical context developed through multiple channels, including oral traditions, family-based instruction, craft practices, agricultural experience, medical traditions, philosophical debates, educational institutions, and community practices. This paper examines the historical role of traditional knowledge in the formation and transformation of Indian society, with particular attention to education, science and technology, medicine, agriculture, environmental practices, and systems of social and cultural transmission. It argues that Indian society historically produced and transmitted knowledge through both formal and informal institutions, allowing knowledge to become embedded in everyday social practices. The paper also considers the changes introduced by colonial rule, particularly the transformation of indigenous educational and intellectual institutions and the growing prominence of Western models of knowledge. At the same time, the study avoids treating traditional knowledge as a completely uniform or unchanging system. It recognises regional differences, social inequalities, changing institutions, and historical adaptations. By examining traditional knowledge as a historical process rather than merely as an inherited cultural resource, the paper seeks to understand its contribution to the making of Indian society and its continuing relevance in contemporary discussions of Indian Knowledge Systems.

Keywords:- Traditional Knowledge, Indian Knowledge Systems, Indian Society, History, Indigenous Knowledge, Education, Science and Technology, Colonialism.

# Indian Knowledge Systems in Indian Economics: A Critical Look at the National Education Policy 2020

**Dr. Neelam kapoor**
Assistant Professor PGDAV (E) College
Delhi University

**Abstract:-**

This paper basically examines the implications of the NEP 2020 towards incorporating the Indian Knowledge System (IKS) into economics. The main idea of NEP is to integrate local

knowledge into an inclusive, balanced education system. The objective of this research is to find out the meaning of this integration for the education in economics in India. We will underline the

importance of achieving the right balance of ideas from the field of international economics and our own traditional knowledge in order to build a more applicable

economic thinking.

**Keywords:-** Multilingual Education, Sustainable Economic Models, Ethics in Economics, Rural Education, Cultural Heritage, Indian Knowledge System (IKS).

# CULTURAL RESURGENCE OF VEDIC ASTROLOGY UNDER CONTEMPORARY KNOWLEDGE SYSTEM

**Dr. P.Radhakrishnan**
Independent Researcher

**Abstract:-**

The heterogeneous insights of Bharatiya Vedāṅga Jyotiṣa is inextricably linked saṃskāra and cultural heritage which serves as ethical compass to promote reflective awareness and self-introspection. Understanding the basic components of intellectual elevation through cosmic well-being align astrological values matching with universal timing aims at ultimate liberation. Cultural astrology serves as a decisive factor of the Indian Knowledge System (IKS), which explore multidisciplinary research models that bridges Human Geography, Anthropology, Philosophy and Psychology impregnated with everyday life other than mere features of prognostication. It targets multifaceted attributes of emotional grounding, psychological reflection, and ethical guidance to millions seeking deeper meaning in contemporary society, synthesizing ancient knowledge systems with modern applications to grab Sharp demarcations. Internet Algorithm and innovative digital accessibility extends borderless expansion beyond global barriers to sustain professional Antiquity Revivalism. Astrologers prepare progressive horoscope and prescient the insights into life events, decision making, and tenacious adversities amalgamating trans-disciplinary cultural paradigms to addresses modern global challenges. Being the science of sciences, it faces open ended hurdles driven by digital revolution partially impede the possibilities of multicultural inquiry under universal perspective. The present day modernity deeply integrate the Vedic darśana(s) to navigate the fourfolded core objectives viz., Dhārma, Artha, Kāma and Mokṣa. This research paper explore the generic verisimilitude of ethnoastronomy which keeps the equilibrium of human civilization amplified by collaborative constituents of time, space and causation.

**Keywords:-** Vedāṅga Jyotiṣa, Vedic darśana Dhārma, Artha, Kāma, Mokṣa.

# Rethinking Ladakh's Geopolitical Significance through the lens of Indian Knowledge System

**Padma Angmo**
Department of Political Science, University of Delhi.

**Abstract:-**

Ladakh’s geopolitical significance is commonly examined through the perspectives of strategic geography, border security, and India’s relations with China and Pakistan. However, the role of traditional knowledge in understanding the region’s strategic landscape remains relatively underexplored. This paper seeks to rethink Ladakh’s geopolitical significance by examining the relationship between indigenous knowledge systems, geographical adaptation, and strategic awareness. Traditional knowledge, including local understandings of terrain, climate, water resources, mountain routes, pastoral practices, and ecological conditions, has historically contributed to community survival and mobility in this high-altitude borderland. Such knowledge may also offer valuable insights into the interpretation of geographical constraints, environmental vulnerabilities, and human adaptation in strategically sensitive regions. The paper adopts an interdisciplinary conceptual approach, drawing on traditional knowledge studies, political geography, and geopolitics to explore how locally embedded knowledge complements conventional state-centric security perspectives. It argues that integrating traditional knowledge into the study of strategic geography can provide a more comprehensive understanding of Ladakh beyond its representation as a militarised frontier. By connecting ecological awareness, cultural practices, and geopolitical analysis, the paper highlights the potential contribution of indigenous perspectives to sustainable borderland governance, environmental security, and strategic planning.

Ultimately, it proposes a more inclusive framework for understanding Ladakh as both a geopolitical space and a living landscape shaped by historical experience and local knowledge.

**Keywords:-** Traditional Knowledge, Ladakh, Strategic Geography, Geopolitics, Indigenous Knowledge Systems, Borderland Governance, Environmental Security.

# Knowledge, Territory and Power: Reinterpreting Ladakh's Geostrategic Significance through Indian Knowledge Systems.

**Nikhil Kumar Rai**
Department of Political Science, University of Lucknow

**Abstract:-**

Ladakh occupies a strategically significant position in India's northern frontier, shaped by its highaltitude terrain, proximity to China and Pakistan, and historical role in trans-Himalayan interactions. Conventional geopolitical analyses primarily interpret the region through territorial sovereignty, military security, and interstate competition. However, such approaches may overlook the intellectual and practical contributions of Indian Knowledge Systems (IKS) to understanding the relationship between knowledge, territory, and power. This paper seeks to reinterpret Ladakh's geostrategic significance through an interdisciplinary framework integrating geopolitics, historical geography, and Indian Knowledge Systems. It examines how traditional geographical understanding, ecological knowledge, cultural practices, historical trade networks, and community-based adaptations have shaped human engagement with the Himalayan landscape. The paper argues that knowledge is not merely a cultural resource but also an important means through which territories are understood, inhabited, and managed. By connecting indigenous knowledge traditions with strategic geography, the study seeks to broaden state-centric interpretations of Ladakh and highlight the relationship between local knowledge, environmental conditions, and

territorial governance. It further explores the potential relevance of these perspectives for sustainable borderland development and environmental security. The paper contributes to contemporary geopolitical debates by proposing a knowledge-centred approach that recognises Ladakh as both a strategic frontier and a historically embedded cultural landscape.

# Indian Traditional Knowledge System for Education: The vision of Viksit @ 2047 – A Discourse on Policy Pedagogy Challenges in 21st Century

**Dr. Munna Lal Yadav**
HOD , Defence and Strategic Studies R. K. P.G. College, Amethi,
Dr. Ram Manohar Lohia Avadh University Ayodhya U.P.

**Abstract:-**

Digital transformation provides many opportunities, it also faces many challenges. Technical deficiencies, such as weak information technology infrastructure in some schools, insufficient digital teaching capabilities of teachers and poor technical adaptability of students, are the main problems in the current digital transformation of higher education. The issue of educational equity is still a difficult problem that needs to be solved in the process of digital transformation, especially how to ensure equal educational opportunities for students in remote areas and low-income families. However, digital transformation has also brought huge opportunities for higher education. Digitalization can promote the optimal allocation of educational resources, break geographical restrictions and enable more students to enjoy high-quality educational resources; at the same time, the continuous advancement of technical means also provides support for the innovation of educational content, teaching methods and evaluation models.

The new education policy must provide to all students, irrespective of their place of residence, a quality education system, with particular focus on historically marginalized, disadvantaged and underrepresented groups. Education is a great leveler and is the best tool for achieving economic and social mobility, inclusion and equality. Initiatives must be in place to ensure that all students from such groups, despite inherent obstacles, are provided various targeted opportunities to enter and excel in the educational system.

Keywords:- Higher education Principles of this Policy, trends, resource allocation, Special Educators, Approach to Teacher Education, digital, management, scientific system, data analysis, data control, strategic development, upgrade building, security standard, governance modernizations, deep international cooperation and challenges, digital in the 21st century.

# The Integrated Mind: A Holistic Model of Cittavṛtti Regulation and Mind Management in the Yoga Vāsiṣṭha

**Dr. Arpit Kumar Dubey**
Assistant Professor(Sanskrit) & Incharge Yoga Philosophy
Morarji Desai National Institute of Yoga

**Abstract:-**

The regulation of mental fluctuations (cittavṛtti-nirodha) is a central concern of classical Yoga philosophy and remains highly relevant to contemporary approaches to

mental well-being, emotional regulation, and stress management. The Yoga Vāsiṣṭha, a significant philosophical text of the Indian tradition, presents a comprehensive understanding of the mind, its tendencies, and the possibility of liberation through knowledge, self-inquiry, and disciplined practice. Rather than considering mind management merely as the suppression of thoughts, the text emphasizes the transformation of mental understanding, the cultivation of discrimination, and the realization of the deeper nature of consciousness. The present study, titled "The Integrated Mind: A Holistic Model of Cittavṛtti Regulation and Mind Management in the Yoga Vāsiṣṭha," aims to develop an integrated framework for understanding mental regulation through three interconnected dimensions: the seven stages of knowledge (Jñāna-saptabhūmi), the four gatekeepers of liberation (Mokṣa-dvāra-pāla), and the practice of prāṇāyāma in its classical and contemporary interpretations.

The seven stages of knowledge—Śubhecchā, Vicāraṇā, Tanumānasī, Sattvāpatti, Asaṃsakti, Padārthābhāvanā, and Turyagā—describe a progressive transformation in the aspirant's understanding, mental orientation, and spiritual realization. These stages provide a conceptual framework for examining the movement from the desire for truth and systematic inquiry to the attenuation of mental distractions, the cultivation of clarity, and the realization of freedom from attachment. Within this framework, mind management is understood as a gradual process of cognitive refinement, emotional balance, and the development of sustained awareness. The four gatekeepers of liberation—Śama (mental tranquillity), Vicāra (inquiry), Santoṣa (contentment), and Satsaṅga (association with the wise and the study of elevating teachings)—offer practical principles for cultivating psychological stability and reducing the influence of habitual mental patterns. Their integration provides an ethical, cognitive, and experiential foundation for the regulation of cittavṛttis.

The study further examines prāṇāyāma as an important component of holistic mind management. In the broader yogic tradition, the regulation of breath is associated with the refinement of attention, the calming of mental activity, and the preparation of consciousness for deeper contemplative practices. Its contemporary interpretation may be explored in relation to autonomic regulation, stress responses, respiratory awareness, and emotional self-regulation, while distinguishing modern physiological explanations from the metaphysical framework of the Yoga Vāsiṣṭha. The integration of breath regulation with inquiry, contentment, mental tranquillity, and progressive knowledge suggests a multidimensional approach to mental well-being.

Methodologically, the study adopts a textual and analytical approach, interpreting relevant concepts of the Yoga Vāsiṣṭha and examining their possible significance for contemporary mind-management practices. It proposes that effective regulation of mental fluctuations requires more than an isolated technique; it involves

the coordinated development of understanding, disciplined attention, emotional equilibrium, and self-awareness. The proposed holistic model may contribute to interdisciplinary discussions connecting Indian philosophical psychology, classical Yoga, and contemporary mental well-being. Ultimately, the study seeks to demonstrate how the Yoga Vāsiṣṭha offers a philosophically grounded and practically meaningful perspective on transforming the mind from a source of disturbance into an instrument of clarity, balance, and liberation.

**Keywords:-** Yoga Vāsiṣṭha, Cittavṛtti Regulation, Jñāna-saptabhūmi, Mokṣa-dvāra-pāla, Prāṇāyāma, Mind Management, Indian Classical Psychology.

# Swami Dayanand Saraswati: A Propagator of the Indian Knowledge Tradition

**Dr. Meghna Sharma**
Associate Professor and Head, Department of History
Maharaja Ganga Singh Univeristy
Bikaner, Rajasthan

**Abstract:-**

The Indian Knowledge Tradition represents India's ancient intellectual, philosophical, spiritual, and cultural heritage. The Vedas, Upanishads, philosophical systems, Ayurveda, Yoga, ethical values, and distinctive perspectives on life constitute its principal foundations. During the nineteenth century, when Indian society was grappling with social evils, religious superstitions, ritualistic practices, and the challenges of colonial rule, Swami Dayanand Saraswati played a significant role in the revival and restoration of the Indian Knowledge Tradition. Considering the Vedas as the primary source of knowledge, he sought to awaken Indian society to the richness and significance of its ancient intellectual heritage. His celebrated call, “Back to the Vedas,” became a symbol of the revival of Indian knowledge and cultural consciousness.

Swami Dayanand Saraswati's vision was not confined to the preservation of ancient knowledge; rather, he also advocated reason, rational inquiry, the pursuit of truth, and the practical application of knowledge. Through his interpretation of the Vedas, he promoted education, social equality, women's education, morality, and human values. He believed that all sections of society should have equal access to knowledge. In this respect, he regarded education as a principal instrument of social transformation and intellectual development.

The Arya Samaj, founded by Swami Dayanand Saraswati in 1875, transformed

the dissemination of the Indian Knowledge Tradition into an organised social and educational movement. Through the Arya Samaj, the propagation of Vedic literature, Sanskrit, Indian philosophy, and ethical education received considerable encouragement. His seminal work, Satyarth Prakash, presents a rational examination of religious beliefs and emphasises the establishment of truth and the necessity of social reform. Educational institutions and gurukuls inspired by his ideas made a notable contribution towards integrating Indian cultural consciousness with modern education.

In the contemporary context, Swami Dayanand Saraswati's ideas hold considerable significance for understanding the relevance of the Indian Knowledge Tradition. In view of the emphasis placed by the National Education Policy 2020 on Indian knowledge systems, local languages, cultural heritage, and value-based education, a reassessment of his educational and social ideas becomes essential. This research aims to analyse Swami Dayanand Saraswati's contribution as a propagator of the Indian Knowledge Tradition and to highlight the contemporary relevance of his ideas in education and society.

**Keywords:-** Swami Dayanand Saraswati, Indian Knowledge Tradition, Vedic Revival, Arya Samaj, National Education Policy 2020.

## Nanda Devi: Presiding Protector of the India-China border in Uttarakhand.

**Dr. Bhagwati Prasad Purohit**

Department of Political Science, Government Degree College Bhupatwala, Haridwar (Uttarakhand)

**Abstract:-**

Since time immemorial, Nanda Devi has been the tutelary deity (Ishta Devi) of the entire Uttarakhand. Here, Nanda Devi is worshipped simultaneously in all three forms of Shakti; it is rare to find a tradition anywhere else in the world where all three forms of Shakti are integrated and worshipped together.

In ancient times, when the kings of Uttarakhand and the emperors of Delhi repeatedly failed to protect their kingdoms from the invasions of Tibetan Huns, Timurid Mongoloids, and other raiders, the shrines, temples, public life, villages, towns, states, and the royal treasury of Uttarakhand routinely fell prey to the plundering of Hun invaders, and the army suffered continuous defeats. During this crisis, the local kings sought refuge in Brahmins to find a solution for defending the kingdom. The Shakta Brahmins of this region, through the power of their penance, deployed divine Shakti at the borders for protection instead of conventional soldiers.

Consequently, the invaders and looters coming from Tibet—whether they were Tibetan Huns or Mongolian raiders—invariably fell victim to natural disasters while crossing passes such as Niti, Barahoti, Homkund, Nandi Kund, Naril Baal Pata, Parvati Kund, and Devtal. The massive armies of the invaders were wiped out by fierce blizzards and avalanches. Thus, the border that could not be protected by the massive armies of the kings of Uttarakhand and the rulers sitting on the throne of Delhi was single-handedly protected by Mother Nanda Devi.

Although this tradition traces its origin back to the Pandava era, its present form originates from the coronation of a prince as Rajpal in Chandpur Garh of Garhwal, who belonged to the 15th generation of Janamejaya. From the 3rd century t the 6th century, this tradition received acceptance, consensus, and contributions from the Maukhari dynasties and numerous other rulers of the country. Due to this uncaused grace of Nanda Devi, a sense of immense reverence exists toward her among the local inhabitants. People in most villages of the mountainous regions of Garhwal and Kumaon have been revereing Nanda Devi as their tutelary deity and travel to the borders every year to perform her worship. Furthermore, every 12 years, the kings of Garhwal and Kumaon would personally present themselves at these frontier worship sites adjacent to the India-China border to solemnise the rituals. In modern times, science, technology, and the news media have turned this long-standing worship tradition of Nanda Devi into a subject of global curiosity.

Traversing 22 halts across a 280 to 300-kilometer rugged mountainous terrain, devotees reach their destination in what is known as the world's longest religious journey. Acknowledging this divine power of Nanda Devi, the government has also named travel agencies and trains after her, while geographical landmarks such as Mount Nanda Devi, Nandaprayag, Nanda Kund, the Nandakini River, and Nandak have existed since ancient times. The current government also implicitly accepts that the power of Nanda Devi not only enriches the faith and morale of our forces but her miraculous power also proves unbelievably helpful in securing our borders. In the present research paper, these facts have been analysed using the historical research methodology.

**Key Word:-** Goddess Nanda is the guardian protecting the border.

# TRADITIONAL ACCOUNTING PRACTICES IN BHARAT: PRECURSOR TO MODERN FIELD OF ACCOUNTANCY

**Dr. Sarthak Gupta**
Assistant Professor, Dyal Singh College, University of Delhi

**Abstract:-**

This paper examines traditional accounting practices in Bharat as a possible precursor to the modern discipline of accountancy, questioning the common assumption that accounting history begins with Pacioli's 1494 treatise on double entry. Using a qualitative, historical-analytical design based on comparative document analysis of primary texts, secondary scholarly literature, and archival material from approximately 1500 BCE to the establishment of the Institute of Chartered Accountants of India, the study traces indigenous practice from Vedic-era enumeration and Arthashastra-based state accounting to medieval Bahi-Khata ledgers. It compares these systems with the principles of dual-aspect recording, periodicity, separation of custody and ownership, and systematic audit, and it considers how colonial administration and professional bodies shaped the transition to Western frameworks. The findings indicate that the control and segregation-of-duties ideas in Kautilya's Arthashastra correspond closely to later principles such as internal checks and regular reporting, whereas the claim that Bahi Khata was a double-entry system before Pacioli remains unresolved for want of verified early records. The colonial-to-professional transition is better explained as institutional layering than as displacement of indigenous practice. The study concludes that Bharatian precursorship is still an unresolved empirical question, though partly, that requires more archival evidence, with implications for accounting education, historiography, and the regulation of hybrid accounting practice. The majority of the evidences, theoretical and otherwise, tilt towards substantiation of Bharatian precursorship claim.

# The Moral Status of Animals in the Manusmṛti: An Indian Knowledge System Approach to Animal Personhood

**Prasad Satyawan Dhuri**
Research Scholar, Department of Sanskrit, University of Mumbai

**Abstract:-**

Recent discussions on animal rights and animal personhood have presented a

more sophisticated and complex view of animals as objects of human ownership, exploitation and use. In the context of Indian Knowledge Systems (IKS), Sanskrit juristic, philosophical and ethical texts provide important indigenous perspectives to consider the moral relationship between humans and other forms of life. This paper critically discusses the representation and moral value of animals in the Manusmṛti, focusing on their animal nature, their karma, rebirth, unnecessary restrictions on violence and the moral duty of humans towards animals. It is analysed that how Manusmṛti places animal existence in a broader moral and cosmological context where it is influenced by the concept of karma, the guṇa, rebirth, and moral action. It does not speak of animals as legal persons (in the current legal sense) but its reference to animal life does not mean that they are morally unimportant creatures. Their modes of being are related to their former actions, their physical circumstances, their species-specific features and the moral implications of human actions towards them. The paper thus seeks to examine whether these ideas can provide an indigenous conceptual basis for the current debates regarding animal welfare, sentience, moral consideration and animal personhood. Concurrently, the ritual use of animal sacrifice and other ritual uses of animals require a critical and historically contextualized interpretation. The paper does not equate the Manusmṛti with recent animal rights theory, but instead suggests that the detailed and sometimes quite ambivalent presentation of animals in the text could be part of a dialogue on the moral value, protection and ethical treatment of non-human life, based on the concept of IKS.

Keywords:- Manusmṛti, Indian Knowledge Systems, Animal Personhood, Animal Ethics, Ahiṃsā, Karma, Dharma, Animal Welfare, Sanskrit Literature.

# Mapping 'Vande Mataram' in Chattopadhyay, Aurobindo, and Nivedita

**Dr. Priyanka Vaidya**
Associate Professor in the Department of English, CDOE
Himachal Pradesh University, Summer Hill

**ABSTRACT:-**

This paper, entitled “Mapping 'Vande Mataram' in Chattopadhyay, Aurobindo, and Nivedita”tries to revisit 'Vande Mataram' as it evolved from its origins in Bankim Chandra Chattopadhyay’s Anand Math into a powerful symbol of India’s freedom movement. It shows how Chattopadhyay’s work gave the song its meaning as both a call to resist and a force for unity. It shows how Sri Aurobindo made 'Vande Mataram' a mantra for the freedom struggle, awakening Indians and turning it into a call for independence to inculcate patriotism in Bharat. It also discusses Sister Nivedita’s role,

especially her use of 'Vande Mataram' in the early Indian flag and her strong support for national self-expression. By examining literary, historical, and cultural changes, the paper explains how 'Vande Mataram' became a lasting symbol of India’s unity, hopes, and persistent fight for freedom.

'Vande Mataram' is the microcosm of the macrocosm, where much remains to be done to fathom the hidden impacts of this mantra in the golden pages of Indian history, where patriots are celebrated. Some point out that the song’s image of the nation as mother uses Hindu symbols, eliciting questions about how inclusive it is for all of India’s religious groups. Others focus on how the song brought people together during the fight against colonial rule, noting that its force lay in galvanising action across multiple regions and cultures. Upon examining these different views, this analysis situates 'Vande Mataram' within wider discussions of nationalism, identity, and culture in both colonial and postcolonial India.

Sister Nivedita helped shape the legacy of 'Vande Mataram' by including it in the national imagination, especially by adding the phrase to her design for the Indian flag. Her work made 'Vande Mataram' both a unifying call and a symbol of unity and resistance. She designed the first Indian flag, placing the Vajra symbol at its centre to honour Rishi Dadhich’s sacrifice. In 1906, she created a flag prototype with the Vajra and wrote about its meaning in both Hinduism and Buddhism. She strongly believed in the Vajra’s importance, saying, "the selfless man is the thunderbolt", to describe national action. Nivedita often showed this thunder-like quality herself, which she said came from her teacher, Swami Vivekananda. She inspired Indians to seek Swaraj, whether by teaching spinning, designing the flag, or singing 'Vande Mataram' in schools despite restrictions. She also promoted Swadeshi and encouraged young people and women to choose Indian products through art and culture. Aurobindo called her Agni Shikha, a flame of fire, and both he and Vivekananda described her as "a real lioness".

Bio-Note:-

Himachal Pradesh's renowned litterateur, Dr Priyanka Vaidya, has been working in the Education Department for the past 16 years. Dr Vaidya is a former fellow of the Indian Institute of Advanced Study, where she authored the biography of Sister Nivedita.

She is currently serving as an Associate Professor in the Department of English, CDOE, at Himachal Pradesh University, Shimla. Fourteen of her books have been published, and two books from IIAS are in press, including five poetry collections, three English-language research books, three short-story collections, and one poetic novel. Additionally, she has edited two books. Her short story collections include: "Lotus Rises in Mud," "Lockdown Diary," and "Gulmarg Gulzar Hoga." Her 2022 poetic novel, "Anandi," is the first of its kind in Himachal Pradesh. This marks a new endeavour. Her nature-themed poetry collection, "When the Cuckoo Sings in the

Himalayas," has garnered significant discussion. She edited two collections of stories by Himachali English storytellers, "Hatu" and "Carnival of Stories," published by the Himachal Pradesh Academy of Arts, Culture, and Languages on the occasion of Azadi ka Amrit Mahotsav. She has contributed to over 100 research papers in English. Vaidya has also served as an Associate Fellow at the Indian Institute of Advanced Study, UGC-IUC.

She has received recognition for her literary contributions, including a state award in English literature and honours by His Excellency, Governor Acharya Devvrat, for representing India abroad. She has been awarded the Woman Achiever Award, the Himalaya Yuva Srijan Samman, the Woman Icon Award, the Shri Atal Bihari Vajpayee Samman, the Kavya Pratibha Samman, and the Sahitya Shree Samman. She has contributed to literature in both Hindi and English, and has been honoured by the Himachal Kala Bhasha Sanskriti Academy for her work in English literature. Dr Vaidya has delivered research papers on Indian culture, literature, and mythology, as well as English literature, at the University of Kent in London. She strives to harmonise the teachings of the Bhagavad Gita, Karmayoga, Kalachakra, Vedas, Upanishads, and Indian culture with English literature. She actively participates in Kavi Sammelan, storytelling, and national and international conferences. She presented a paper on Pravasi Indian English Literature in Camden Town, London, exploring the pain and feelings of Indians compelled to leave their homeland for economic and social reasons—highlighting their struggle to retain their roots and find their place in a new country.

❑❑❑

# वैश्विक संस्कृत मञ्च

## Global Sanskrit Forum

Plot no. 3B, Khasra no. 611, Gali no. 1, B-Block,
Saraswati Avenue, Sabhapur Extn., Shahdara, Delhi-110094
Contact : 8789507760
Email : globalsanskritforum@gmail.com
Website : https://globalsanskritforum.org